शोधादर्श

79

ओसिया में स्थित प्रसिद्ध महावीर मन्दिर

तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उत्तर प्रदेश, लखनऊ

श्री राजीव कान्त जैन की कृति सोनचिरैया फिर चहकेगी का लोकार्पण

श्री सूर्य कुमार पाण्डेय द्वारा श्रद्धेय डॉ. ज्योति प्रसाद जैन जी के चित्र पर माल्यार्पण

श्री नलिन कान्त जैन, श्रीमती बिन्दु जैन, श्री राजीव कान्त जैन, डॉ. सरल अवस्थी, श्री सूर्य कुमार पाण्डेय, श्री रवीन्द्र कुमार 'राजेश' और डॉ. शशि कान्त द्वारा लोकार्पण

डॉ. शशि कान्त द्वारा आशीर्वचन

श्री राजीव कान्त जैन द्वारा स्वकथ्य

आद्य सम्पादक	:	(स्व.) डॉ. ज्योति प्रसाद जैन
पूर्व प्रधान सम्पादक	:	(स्व.) श्री अजित प्रसाद जैन
पूर्व सम्पादक	:	(स्व.) श्री रमा कान्त जैन
मार्गदर्शक	:	डॉ. शशि कान्त
सम्पादक	:	श्री नलिन कान्त जैन
सह–सम्पादक	:	श्री सन्दीप कान्त जैन
	:	श्री अंशु जैन 'अमर'
	:	सौ. डॉ. अलका अग्रवाल

प्रकाशक

तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उ.प्र.

ज्योति निकुंज, चारबाग, लखनऊ–226004, टेलीफोन सं. (0522) 2451375

ई–मेल : shodhadarsh@gmail.com

णाणं णरस्स सारं – सच्चं लोयम्मि सारभूयं

ज्ञान ही मनुष्य जीवन का सार है

सत्य ही लोक में सारभूत तत्त्व है

शोधादर्श - 79

वीर निर्वाण संवत् 2540 जून 2014 ई.

विषय क्रम

1	सम्पादकीय	श्री नलिन कान्त जैन	4
2	गुरुगुण–कीर्तन : आचार्य तुलसी	डॉ. शशि कान्त	5–9
3	जैन–इतिहास विषयक भ्रांतियों का निरसन	डॉ. ज्योति प्रसाद जैन	10–13
4	समाज सुधार में धर्मगुरुओं की महत्वपूर्ण भूमिका हो	श्री अजित प्रसाद जैन	14–15
5	जैन पुस्तकों और पत्र–पत्रिकाओं के आवरण पृष्ठ	श्री रमा कान्त जैन	16–18
6	दस–लक्षण पर्व	श्रीमती इन्दु कान्त जैन	19–20
7	भज लो चौबीसी जिनराज (पद्य)	श्री लूण करण नाहर जैन	21
8	बोलिये! कैसे बचेगा धर्म (पद्य)	डॉ. परमानन्द जड़िया	22
9	जीवन चलता फिरता मेला (पद्य)	श्री कृपाशंकर शर्मा अचूक	23

10	गोचर—अगोचर (पद्य)	श्री अमरनाथ	24
11	दीप बन मैं जल रहा हूं (पद्य)	श्री मुक्तेश जैन 'सरस'	25
12	सरस्वती वंदना (पद्य)	श्रीमती स्वर्णलता श्रीवास्तव	26
13	जैन मूर्तिकला में गणविघ्नेश का अंकन	डॉ. ए. एल श्रीवास्तव	27—30
14	भांडासर जैन मन्दिर	श्री ललित कुमार नाहटा	31—33
15	कर्म प्रकृतियों का रूपान्तरण—परिवर्तन	डॉ. रत्नलाल जैन	34—38
16	महादुखरूप इच्छाओं का स्वरूप और भेद—प्रभेद	डॉ. राजेन्द्र कुमार बंसल	39—43
17	भक्ष्य—अभक्ष्य : चिन्तन अपेक्षित	श्री अजित जैन 'जलज'	44—47
18	तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति प्रगति प्रतिवेदन (2013—14)	श्री नलिन कान्त जैन	48—52
19	श्री राजीव कान्त जैन की *'सोनचिरैया फिर चहकेगी'* का लोकार्पण	श्रीमती मधु जैन	53—59
20	साहित्य सत्कार प्राकृत सूक्ति कोश ; कर भला सो हो भला; सौ बोध कथाएं; जैन आचार मीमांसा में जीवन प्रबन्धन के तत्त्व; महिमा भक्तामर स्तोत्र की; श्री सूर्य स्तवन; हीरक माला; अनुभूति के स्वर; काव्य सुधा मंदाकनी; विच्छेदित तीर्थो की खोज; राजस्थानी कहावतें; गड़बड़झाला	डॉ. शशि कान्त	60—65
21	आभार		66
22	अभिनन्दन		67—68
23	शोक संवेदन		69—70
24	समाचार विविधा प्राकृत जैनशास्त्र और अहिंसा शोध संस्थान, वैशाली कुन्द—कुन्द भारती, दिल्ली जैन, बौद्ध एवं उपनिषद् वाङ्मय संगोष्ठी, जोधपुर		71—74
25	पाठकों के पत्र डॉ. ए. एल. श्रीवास्तव श्री कैलाश नारायण टन्डन डॉ. परमानन्द जड़िया		75—78

श्री बी.डी. अग्रवाल
डॉ. (कु.) मालती जैन
श्री ललित सी. शाह
पं. सरमन लाल जैन 'दिवाकर'
श्री सुरेश जैन
श्री सुशील के. मित्तल

26 आवश्यक सूचना 79

27 शोधादर्श के अभिदाता 80

चित्र परिचय

कवर पृ.1

ओसिया में स्थित प्रसिद्ध महावीर मन्दिर
(9वी से 12वी शती ईस्वी)

कवर पृ. 2

श्री राजीव कान्त जैन की कृति *सोनचिरैया फिर चहकेगी* का लोकार्पण

1 श्री सूर्य कुमार पाण्डेय द्वारा श्रद्धेय डॉ. ज्योति प्रसाद जैन जी के चित्र पर माल्यार्पण

2 श्री नलिन कान्त जैन, श्रीमती बिन्दु जैन, श्री राजीव कान्त जैन, डॉ. सरल अवस्थी, श्री सूर्य कुमार पाण्डेय, श्री रवीन्द्र कुमार 'राजेश' और डॉ. शशि कान्त द्वारा लोकार्पण

3 डॉ. शशि कान्त द्वारा आशीर्वचन

4 श्री राजीव कान्त जैन द्वारा स्वकथ्य

कवर पृ. 3

5–6 श्री लूण करण नाहर जैन और प्रो. डॉ. विजय कुमार जैन द्वारा श्रद्धांजलि एवं शुभ कामना

7 विशिष्ट अतिथि डॉ. सरल अवस्थी द्वारा समीक्षा

8 मुख्य अतिथि श्री रवीन्द्र कुमार 'राजेश' द्वारा उद्बोधन

9 श्री सूर्य कुमार पाण्डेय द्वारा अध्यक्षीय सम्बोधन

✧✧✧

सम्पादकीय

शोधादर्श के प्रति हमारे सहृदय पाठकों की जो सद्भावना युक्त प्रतिक्रिया प्राप्त हुई हैं उनसे हमें अपने कार्य में प्रेरणास्पद बल मिला है। **शोधादर्श 78** में प्रकाशित लेख 'राजगृह' का **जैन सन्देश** के महावीर जयन्ती अंक में साभार प्रकाशन किया गया। उस अंक के सम्पादक मण्डल को इसके लिए हम साधुवाद देते हैं।

शोधादर्श के प्रस्तुत अंक में कुछ विशिष्ट सामग्री दी जा रही है। हमारा प्रयास है कि जैन इतिहास, कला, दर्शन और समाज–चिन्तन के उन पक्षों को प्रकाश में लाया जाये जो सामयिक और प्रासंगिक भी हैं तथा सामान्यतः उपेक्षित भी हैं।

हम चाहते हैं कि जैन साहित्य, कला, इतिहास आदि के विषय में जो शोध कार्य हो रहा है उसका परिचय **शोधादर्श** में दिया जाये ताकि शोधकर्ताओं को प्रोत्साहन मिले। जिन शोधकर्ताओं ने अपना शोध कार्य पूरा कर लिया है वह अपने शोध–प्रबन्ध का सार–संक्षेप अधिकतम चार पृष्ठों में टाइप कराके अपने हस्ताक्षर सहित उपलब्ध करायें और उसमें शोध कार्य सम्पन्न किये जाने का विवरण भी दें।

हमारा यह प्रयास है कि इस पत्रिका में ऐसी सामग्री प्रकाशित की जाये जो तथ्यपरक और कदाग्रह–निरपेक्ष तथा समन्वयवादी हो। इस प्रकार की सामग्री से बौद्धिक चेतना जागृत होगी और युवा पीढ़ी को भी विषय में अभिरुचि उत्पन्न होगी।

अपरिहार्य कारणों से इस अंक का प्रकाशन कुछ विलम्ब से सम्भावित है जिसके लिए हमें खेद है।

30–06–2014

नलिन कान्त जैन
सम्पादक

20वीं शताब्दी के एक प्रभावक जैन संत आचार्य तुलसी

– डॉ. शशि कान्त

ईस्वी सन् की 20वीं शताब्दी में जैन धर्म की दिगम्बर और श्वेताम्बर दोनों आम्नायों में कुछ प्रभावक संत हुए जिन्होंने मात्र धर्म का प्रचार ही नहीं किया वरन् समाज सुधार के लिए भी विशिष्ट कार्य किये। श्वेताम्बर आम्नाय के तेरापंथ सम्प्रदाय में आचार्य तुलसी ऐसे ही प्रभावक संत थे। वर्ष 2014 आचार्य तुलसी का जन्म शताब्दी वर्ष है। अतः उनको स्मरण किया जाना अभीष्ट है।

आचार्य तुलसी का जन्म ईस्वी सन् 1914 में राजस्थान प्रदेश में स्थित लाडनूं में हुआ था। उनके पिता श्री झूमरमल खटेड़ थे और माता श्रीमती वदना खटेड़ थी। सन् 1925 में तेरापंथ के तत्कालीन आचार्य कालूगणि लाडनूं आये थे। तब तुलसी की आयु मात्र 11 वर्ष की थी। बालक तुलसी आचार्य कालूगणि के चुम्बकीय व्यक्तित्व से इतने प्रभावित हुए कि उन्होंने आचार्य श्री के सान्निध्य में साधना करने का निश्चय किया और मुनि दीक्षा अंगीकार की। सन् 1936 में आचार्य श्री कालूगणि ने देहावसान से मात्र 4 दिन पूर्व संघ में अनेक वरिष्ठ मुनियों के होते हुये 22 वर्षीय मुनि तुलसी को उनके नैष्ठिक जीवन और दूरदर्शी चिन्तन के कारण वरीयता देते हुए तेरापंथ सम्प्रदाय का युवाचार्य घोषित कर दिया। इस परम्परा के वह सर्वाधिक युवावस्था के आचार्य थे।

समाज सुधारक

सन् 1935 से 1945 तक का दशक नये और पुराने विचारों की संक्रान्ति का समय था। समाज के बुजुर्ग लोग रूढ़िवाद के पक्ष में थे और समाज में जातिवाद का प्रभाव था। यह धारणा भी बद्धमूल थी कि साधु संघ अध्यात्म के क्षेत्र में काम करे और लौकिक परम्पराओं से उसका कोई सरोकार नहीं होना चाहिए। आचार्य तुलसी से भी जब इस सम्बन्ध में चर्चा की गई तो उन्होंने उस समय यही कहा कि सामाजिक परिस्थितियों में हम कुछ नहीं कर सकते क्योंकि हमारी अपनी सीमाएं हैं और हम सीमा से बाहर नहीं जा सकते। परन्तु जब आचार्य तुलसी ने स्वयं चिन्तन किया तो

वह इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि धर्म उत्कृष्ट मंगल है और असंयम व्यक्ति, परिवार या समाज में कहीं भी हो उसे दूर करने का प्रयास ही धर्म है। भगवान महावीर ने इसी उद्देश्य से धर्म क्रान्ति की थी और जातिवाद, दासप्रथा आदि समाजिक बुराइयों पर प्रहार किया था। इस चिन्तन के साथ आचार्य तुलसी का मार्ग प्रशस्त हो गया। उन्होंने तय कर लिया कि वैयक्तिक, पारिवारिक, सामाजिक व राष्ट्रीय क्षेत्र में जो बुराइयां है उनको मिटाने के लिए हमें कार्य करना है। यहीं से आचार्य तुलसी के प्रभावक व्यक्तित्व का प्रारंभ होता है। साधु संघ में आचार्य तुलसी की प्रेरणा से रूढ़िवादी चिन्तन का क्रम बदलने लगा। उन्होंने स्वयं के लिए भी मात्र **आचार्य तुलसी** सहज सम्बोधन को स्वीकार किया।

आचार्य तुलसी ने तत्कालीन सामाजिक कुप्रथाओं का गहन अध्ययन किया। सामाजिक परिवर्तन की दिशा में पहल करते हुए आचार्य तुलसी ने 1948 में छापर (जिला चुरू) में तेरह नियमों की सामाजिक आचार संहिता की घोषणा की। ये नियम थे – मृत्यु भोज नहीं करना, मृत्यु प्रसंग पर सात दिनों से अधिक शोक नहीं रखना, बाल–विवाह व अनमेल विवाह नहीं करना, किसी को ऊंच–नीच एवं अस्पृश्य नहीं समझना, घूंघट–पर्दा नहीं रखना, धर्म स्थान में तेरह तोले से अधिक स्वर्णाभूषण नहीं पहनना, नारी शिक्षा को प्रोत्साहन देना, आदि।

स्वस्थ समाज की परिकल्पना को मूर्त रूप देने के लिए 1 मार्च 1949 को सरदारशहर में आचार्य तुलसी ने **अणुव्रत आन्दोलन** का प्रवर्तन किया। इसमें 11 नियम रखे गये। 1960 में आचार्य तुलसी ने मेवाड़ से बंगाल तक लगभग तीन हजार कि.मी. की पद यात्रा की। 5 अप्रैल 1960 (चैत्र शुक्ला नवमी, विक्रम संवत् 2017) को बगड़ी ग्राम में आयोजित आचार्य भिक्षु अभिनिष्क्रमण समारोह पर प्रयाण गीत का समवेत स्वरों में सहगान किया –

> नया मोड़ हो उसी दिशा में, नई चेतना फिर जागे,
> तोड़ गिरायें जीर्ण–शीर्ण, जो अन्ध रूढ़ियों के धागे।
> आगे बढ़ने का यह युग है, बढ़ना हमको सबसे प्यारा,
> प्रभो! तुम्हारे पावन पथ पर जीवन अर्पण है सारा।
> बढ़े चलें, हम रुकें न क्षण भर, हो यह दृढ़ संकल्प हमारा।।

साहित्य प्रणेता

श्वेताम्बर परम्परा में आचार्य सुधर्मा द्वारा संकलित आगम ग्रन्थ प्रचलित हैं। इन ग्रन्थों में भगवान महावीर की शिक्षायें संग्रहीत हैं। ये आगम ग्रन्थ भगवान महावीर के निर्वाण के 980 या 993 वर्ष बाद वाचना में देवर्द्धिगणि द्वारा लिपिबद्ध किये गये थे। तेरापंथ सम्प्रदाय में प्रथम आचार्य भिक्खु स्वामी द्वारा आगमों का गहन अध्ययन किया गया। चतुर्थ आचार्य जयाचार्य द्वारा आगमों की पद्य बद्ध व्याख्या की गई जिसमें "भगवती जोड़" प्रमुख है। तेरापंथ के आठवें आचार्य कालूगणि हुए। आचार्य तुलसी (नवम आचार्य) एवं मुनि नथमल 'महाप्रज्ञ' के नाम से दशम आचार्य हुए। इस समय महाश्रमण ग्यारहवें आचार्य के रूप में प्रतिष्ठित हैं।

धर्म दूत पत्रिका में बौद्ध पिटकों के पुनः सम्पादन और प्रकाशन के संवाद को पढ़ने पर 7 मार्च 1955 को आचार्य तुलसी की जैन आगमों के सम्पादन की ओर दृष्टि गई। महाराष्ट्र प्रदेश के औरंगाबाद में विक्रम संवत 2011 में चैत्र शुक्ल त्रयोदशी को महावीर जयंती के दिन आचार्य तुलसी ने यह घोषणा की – "जैन आगमों का आधुनिक और वैज्ञानिक दृष्टि से सम्पादन करना है। मूलपाठ का संशोधन, संस्कृत छाया, हिन्दी अनुवाद, समीक्षात्मक टिप्पणियां आदि सम्पादन के जितने अंग हैं, समग्र रूप से काम करना है।" सभी आगम ग्रन्थों का सम्पादन आचार्य महाप्रज्ञ के सहयोग से आचार्य तुलसी द्वारा सम्पन्न किया गया। आचार्य तुलसी का जैन आगम साहित्य के उद्धार में यह महनीय कार्य रहा।

आचार्य तुलसी बहुभाषाविद थे। उन्होंने संस्कृत, प्राकृत, हिन्दी व राजस्थानी भाषा में साहित्य की रचना की। हिन्दी साहित्य में गद्य और पद्य दोनों विधाओं में शताधिक ग्रन्थों की रचना की। उनकी प्रमुख काव्य कृतियों में चरित्र काव्य (**कालूयशोविलास, डालिम चरित्र, माणक महिमा, मां वदना**), पौराणिक काव्य (**अग्नि परीक्षा, भरत मुक्ति**), नीति काव्य (**तेरापंथ प्रबोध, नन्दन निकुंज, शासन सुषमा, श्रावक सम्बोध, सोमरस, सुधारस, आषाढ़भूति**) तथा विविध आख्यान–व्याख्यान काव्य उल्लेखनीय हैं। उनका **अग्नि परीक्षा** काव्य बहुत चर्चित रहा और इस काव्य के सन्दर्भ से परम्परागत **रामायण** के सनातन धर्मी भक्तगणों ने इसके विरोध में आन्दोलनात्मक रुख भी अपनाया।

राष्ट्र चिन्तन

यद्यपि आचार्य तुलसी आध्यात्मिक क्षेत्र से सम्बन्धित थे उन्होंने राष्ट्रीय समस्याओं पर भी चिन्तन किया था और अपने विचार व्यक्त किये थे। अपनी **पुस्तक राजपथ की खोज** में उन्होंने लिखा है – "संसद जनता को चिल्ला–चिल्ला कर कह रही है कि कृपा करके तीन प्रकार के व्यक्तियों को चुन कर संसद में मत भेजिये। पहले वे जो परदोष दर्शी हैं, जो विपक्ष की अच्छाई में भी बुरा देखने वाले हैं। दूसरे वे जो कुटिल हैं, मायावी हैं, नेता नहीं अभिनेता हैं, असली पात्र नहीं, विभीषण की भूमिका निभाने वाले हैं, सत्ता प्राप्ति के लिए अकर्णीय उनके लिए कुछ भी नहीं है, जिस जनता के कन्धों पर बैठकर केन्द्र तक पहुंचते हैं उसके साथ भी धोखा कर सकते हैं। जिस दल के घोषणा पत्र पर चुनाव जीत कर आये हैं उसकी पीठ पर छुरा भोंक सकते हैं। तीसरे इन व्यक्तियों से मुझे दूर रखिये जो असंयमी हैं, चरित्रहीन हैं, जो सत्ता में आकर राष्ट्र से भी अधिक महत्व अपने परिवार को देते हैं। देश से भी अधिक महत्व अपनी जाति और सम्प्रदाय को देते हैं। सत्ता इनके लिए सेवा का साधन नहीं विलास का साधन है। भारतीय संसद भारतीय जनता के द्वार पर अपनी मर्मभेदी पुकार लेकर खड़ी है।" उन्होंने यह विचार भी व्यक्त किया था कि वोटों का बेचा जाना और खरीदा जाना यह दोनों बातें लोकतंत्र की दुश्मन हैं। लोकतंत्र के स्वरूप के सम्बन्ध में जो विचार आचार्य तुलसी ने समय–समय पर व्यक्त किये थे वे आज भी प्रासंगिक हैं।

विविध

आचार्य तुलसी ने 1980 में विश्व के कोने–कोने में जैन धर्म का प्रचार करने की दृष्टि से गृहस्थ और साधु के बीच की कड़ी के रूप में **समण** श्रेणी का सूत्रपात किया। समण और समणी सुशिक्षित प्रचारक के रूप में कार्य करने के लिए प्रशिक्षित किये गये। उन्होंने साधु चर्या का भी यथावश्यक आधुनिकीकरण किया, बाल दीक्षा का भी विरोध किया और हरिजन उद्धार का कार्य भी प्रभावक ढंग से किया।

1970 में लाडनूं में **जैन विश्वभारती** की स्थापना की गई। इस संस्था का मुख्य लक्ष्य था जैन धर्म का अन्य धर्मो के साथ तुलनात्मक अध्ययन करना तथा जैन विद्या की शिक्षा के विकास में योगदान देना। **जैन विश्वभारती संस्थान** विश्वविद्यालय के रूप में मानित है।

आचार्य महाश्रमण, जो वर्तमान में जैन श्वेताम्बर तेरापंथ धर्मसंघ के अनुशास्ता हैं, ने अपनी विनयांजलि में उल्लेख किया है कि आचार्य तुलसी ने अपने जीवन काल में आचार्य पद का परित्याग कर अपने युवाचार्य को आचार्य बना दिया। यह युवाचार्य मुनि नथमल थे जो आचार्य महाप्रज्ञ के रूप में आचार्य पद पर आसीन हुए। आचार्य महाप्रज्ञ के उत्तराधिकारी आचार्य महाश्रमण हैं। आचार्य तुलसी का 83 वर्ष की वय में 1997 में महाप्रयाण हुआ।

आचार्य तुलसी ने 60 वर्ष संघीय दायित्व का निर्वहन करने के पश्चात् 82 वर्ष की वय में 1996 में यह दायित्व युवाचार्य महाप्रज्ञ को सौंप दिया। उस समय उन्होंने कहा – "अब तुम आचार्य हो, मैं सिर्फ तुलसी हूं। मैंने यह कार्य बहुत सोच–समझ कर किया है। मैं दो कार्यो में अपनी शक्ति का नियोजन करना चाहता हूं – (1) अध्यात्म साधना के लिए, (2) मानवता की सेवा के लिए।"

स्मरण

1998 में उनकी स्मृति में भारत सरकार द्वारा डाक टिकट जारी किया गया था। इस जन्म शताब्दी वर्ष 2014 में भारत सरकार द्वारा 5 रुपये का सिक्का जारी किया गया है जिसका समुचित प्रचार चेन्नई के श्री एन.सुगालचंद जैन कर रहे हैं। सिक्के पर आचार्य तुलसी का चित्र है और रिज़र्व बैंक द्वारा जारी कार्ड पर आचार्य तुलसी की उक्ति The language of Dharma is beyond schisms such as caste, creed and community (वर्ण, जाति और सम्प्रदाय से मुक्त धर्म की भाषा) उल्लिखित है। **तुलसी प्रज्ञा** का जुलाई–दिसम्बर 2013 का अंक आचार्य तुलसी को समर्पित है, और उसमें प्रकाशित विविध सामग्री के आधार से आचार्य तुलसी का उपरोक्त परिचय प्रस्तुत किया गया है।

आचार्य तुलसी के इस जन्म शताब्दी वर्ष में उनका स्मरण किया जाना इस दृष्टि से महत्वपूर्ण है कि वे मात्र एक धार्मिक सम्प्रदाय से सम्बद्ध साधु नहीं थे, वरन् एक समाज सुधारक और राष्ट्र को प्रगतिशील चिन्तन के लिए प्रेरित करने वाले जन नायक भी थे। **शोधादर्श** परिवार भी उनकी स्मृति में श्रद्धा सुमन अर्पित करता है।

✧✧✧

जैन–इतिहास विषयक भ्रान्तियों का निरसन

– इतिहास–मनीषी डॉ0 ज्योति प्रसाद जैन

जैन धर्म की प्राचीनता एवं इतिहास के विषय में अज्ञानवश, पूर्वबद्ध धारणाओं और कभी–कभी साम्प्रदायिक व्यामोह या निहित स्वार्थों के कारण भी, अनेक भ्रान्तियां रहती रही हैं, यदा–कदा नवीन भ्रान्तियों को भी जन्म दिया जाता रहा है। यद्यपि इन भ्रान्तियों के निरसन का प्रयास भी प्रायः प्रारम्भ से ही निरन्तर किया जाता रहा है तथापि जैनों की तथा तद्विषयक जैन–अजैन लेखकों की अत्यल्प संख्या के कारण ये प्रयास नक्कारखाने में तूती की आवाज बनकर रह जाते हैं। इसमें शिक्षित एवं प्रबुद्ध जनों का स्वयं का प्रमाद भी एक बड़ा कारण रहा है।

आधुनिक युग में जैन धर्म का इतिहास प्रारम्भिक यूरोपवासी प्राच्यविदों के हाथ का चिरकाल पर्यन्त खिलौना बना रहा। इसका एक कारण यह रहा है कि जैन धर्म और उसकी संस्कृति का अध्ययन करने के बहुत पूर्व ही वे लोग बौद्ध धर्म का पूरी तरह और हिन्दू (ब्राह्मण) धर्म की परम्परा का भी पर्याप्त अध्ययन कर चुके थे। दूसरे, जैनधर्म विषयक जानकारी प्राप्त करने के लिए जो जैन पुस्तकें उन्हें प्रारम्भ में उपलब्ध भी हुईं, वे नितान्त अपर्याप्त, सदोष, सन्दिग्ध कोटि की और अविश्वसनीय थीं। ब्राह्मण पण्डितों ने भी साम्प्रदायिक विद्वेषवश जैनधर्म को समझने में उनकी कोई सहायता नहीं की। परिणामतः वे प्राच्यविद् जैनधर्म को उत्तरकालीन बौद्धधर्म की एक शाखा अथवा विरोध स्वरूप उससे कटकर अलग हुआ उसका एक सम्प्रदाय–मात्र मान बैठे। इस प्रकार कई दशकों पर्यन्त जैनधर्म की वास्तविक ऐतिहासिक स्थिति अन्धकाराच्छन्न बनी रही। सुप्रसिद्ध जर्मन प्राच्यविद् डॉ0 हर्मन जैकोबी ने, 19वीं शताब्दी के अन्त के लगभग, यह स्पष्ट रूप से स्वीकार किया था – "हम लोग जैन धर्म विषयक वस्तुस्थिति को अभी हाल में ही ठीक–ठीक समझ पाये हैं। उसके पूर्व यह विश्वास किया जाता था कि वह बौद्ध धर्म की ही एक शाखा है। कारण यह था कि उस समय पाश्चात्य विद्वान बुद्ध और बौद्धधर्म से भलीभांति परिचित हो चुके थे, और क्योंकि उसकी जन्मभूमि भारतवर्ष के बाहर अनेक एशियाई देश उस धर्म के अनुयायी हैं, स्वभावतः उसे ही अन्य सदृश धर्मों का जनक मान लिया गया, और लगता था कि जैन धर्म भी उन्हीं में से एक है।"

जैनधर्म को बौद्धधर्म की शाखा मान लेने पर यह प्रश्न उपस्थित हुआ कि वह मूल (बौद्ध) धर्म से कब पृथक होकर उदय में आया? इस

प्रश्न का समाधान भी चीनी पर्यटक युवान च्वांग (629–645 ई.) के यात्रा–वृत्तांत में सहज ही प्राप्त कर लिया गया। उत्तर भारत की अपनी यात्रा में यह चीनी यात्री पंजाब में स्थित सिंहपुर नामक स्थान में भी पहुंचा था, जहां सम्भवतया श्वेताम्बर जैन यतियों का एक अधिष्ठान विद्यमान था। उनकी वेशभूषा, रहन–सहन और आचार–विचार में अपने भारतीय सहधर्मियों (बौद्धों) के साथ बाह्य साम्य लक्ष्य करके युवान च्वांग ने यह निष्कर्ष निकाल लिया कि "यहां सिंहपुर में ही इन श्वेतवसन साम्प्रदायिकों के आद्य गुरु ने बोधि प्राप्त की थी और अपने द्वारा आविष्कृत मत का प्रथम उपदेश दिया था।" सुदूर चीन देश से आए सातवीं शती ईस्वी के इस बौद्ध तीर्थ यात्री के उपरोक्त अस्पष्ट एवं चलतऊ कथन पर से उसके यात्रा वृत्तांत के प्रसिद्व आंग्ल अनुवादक टामस वाटर्स ने तथा उसकी पुस्तक के सम्पादकों ने यह प्रतिपादित कर दिया कि "इस चीनी यात्री के मतानुसार जैनधर्म बौद्धधर्म का परवर्ती है और मुख्यतया उसी में से निकला है।"

आश्चर्य की बात यह है कि यही चीनी यात्री अपने वृत्तांत में अनेक स्थलों पर कियापिशि (कैप्सिया या काबुल) से लेकर कुमारी अन्तरीप और बंगाल एवं उड़ीसा से लेकर पश्चिमी समुद्रतट पर्यन्त अपनी यात्रा में प्रायः सर्वत्र मिले जिन प्राचीन निर्ग्रन्थों (लि हि अर्थात् निर्ग्रन्थ परम्परा के दिगम्बर मुनियों) की, उनके देव मन्दिरों की, अधिष्ठानों की और उनके अनुयायी नरेशों एवं जन–समुदायों की विद्यमानता का स्पष्ट उल्लेख करता है, उनका समीकरण तो उक्त विद्वानों ने जैनों के साथ किया नहीं और उसके द्वारा उल्लिखित 'सिंहपुर के श्वेतवसन हेरेटिक्स' को ही तत्कालीन जैनों का एकमात्र प्रतिनिधि मान बैठे।

सम्भवतया प्रोफेसर होरेस विल्सन ही वह विद्वान था जिसने उपरोक्त लचर आधार को लेकर इस मत का सर्व प्रथम प्रतिपादन किया था कि जैनधर्म बौद्धधर्म की एक शाखा है जो सातवीं शती ई. में उस समय उदय में आयी जबकि स्वयं बौद्धधर्म इस देश में द्रुतगति से तिरोहित हो रहा था। लेसन, बार्थ, हन्टर, वेबर तथा अन्य अनेक विद्वानों ने इस मत का अनुकरण किया। उनमें से कई ने तो यह भी स्पष्टतया स्वीकार किया कि जैनधर्म के सम्बन्ध में उनकी जानकारी अभी भी अपर्याप्त एवं अपूर्ण थी। उस मत के प्रभूत प्रचार का श्रेय सर रोपर लेथब्रिज की पुस्तक 'हिस्टरी ऑफ इण्डिया' को है। इन प्रारम्भिक इतिहासकारों में से एलफिन्स्टन प्रभृति कई एक ने तो जैनधर्म के पूरे

इतिहास को केवल पांच शताब्दियों के भीतर ही सीमित कर दिया, और यह कह डाला कि सातवीं शती ई. में इस धर्म का उदय हुआ, आठवीं–नौवी में इसका प्रचार और फैलाव हुआ, दसवीं शती में यह अपनी उन्नति के चरम शिखर पर पहुंचा, ग्यारहवीं–बारहवीं शतियों में इसका पतन हो गया और तदनन्तर एक छोटे से गौण सम्प्रदाय के रूप में प्राचीन बौद्धधर्म का उसकी जन्मभूमि में प्रतिनिधित्व करता हुआ यह रहता आया है।

जैनधर्म बौद्धधर्म की शाखा है, इस मत को किस प्रकार बल मिला, इस बात पर प्रकाश डालते हुए डॉ0 जैकोबी कहते हैं – "संस्कृत भाषा एवं प्राच्य विद्या के आंग्ल पण्डितों में सर्वप्रमुख कोलब्रुक ने जैन धर्म के विषय में सही जानकारी दी थी। उसने स्वयं को उन निराधार मतवादों से भी मुक्त रखा था जिनमें भाषा–विज्ञान के क्षेत्र में कार्य करने वाले उस काल के विद्वान सहज ही ग्रस्त हो जाते थे। वस्तुतः वह ऐसा समय था जब कार्यकारी प्रतिपत्तियों, स्थापनाओं और मतों को लेकर चले बिना काम नहीं चलता था। जैनधर्म बौद्धधर्म से अपेक्षाकृत बहुत पीछे पृथक हुआ है, इस मत को आमतौर पर प्रचारित कर दिया। परन्तु स्वयं उसके गुरु अल्ब्रेख्ट वेबर ने विल्सन के मत में संशोधन करके बौद्धधर्म में से जैनधर्म के निकलने का समय चौथी शताब्दी ईसा पूर्व निर्धारित किया था। निश्चय ही इस संशोधन का कारण यह था कि अशोक के शिलालेखों में, जो अब पढ़े जा चुके थे, जैन (निर्ग्रन्थ) धर्म का स्पष्ट उल्लेख प्राप्त होता है।" इसके विपरीत, मैक्समूलर और ओल्डनबर्ग यह मानते थे कि बौद्ध ग्रन्थों के निगंठ नातपुत्त ही महावीर थे और वह बुद्ध के समसामयिक थे। फ्रांसीसी विद्वान डॉ0 गेरीनाट ने वर्द्धमान और गौतमबुद्ध के बीच पांच भिन्नताओं की ओर विद्वानों की दृष्टि आकर्षित की, यथा दोनों के जन्म विषयक वर्णन, दोनों की जननियों का निधन कैसे हुआ, दोनों के गृहत्याग, ज्ञान प्राप्ति और निर्वाण। वस्तुतः जैसा कि डॉ0 राधाकृष्णन् ने कथन किया है – "भारतीय परम्परा तो जैन और बौद्ध – दोनों धर्मो को सदैव से स्पष्टतया पृथक एवं स्वतन्त्र मानती आयी है। हिन्दू शास्त्रों ने कभी भी उन दोनों को अभिन्न नहीं प्रतिपादित किया। उक्त शास्त्रों के साक्ष्य की गेरिनाट, जैकोबी, व्हूलर प्रभृति अनेक विद्वानों के अन्वेषणों से पुष्टि होती है।" मोशियों पुशिन का तो विश्वास था कि जैन तो एक सशक्त साधुसंघ था जिसका उदय अथवा पुनर्गठन शाक्य मुनि (बुद्ध) के उदय के कुछ काल पूर्व ही हो चुका था। कोलब्रुक भी बहुत

पहले ही यह विश्वास प्रगट कर चुका था कि जैनधर्म बौद्धधर्म का पूर्ववर्ती है क्योंकि वह प्रायः प्रत्येक पदार्थ में जीव की सत्ता स्वीकार करता है।

डॉ0 जैकोबी के तत्सम्बन्धी गवेषणा के क्षेत्र में पदार्पण करने के समय तक यह मान्यता बन चली थी कि जैनधर्म बौद्धधर्म से स्वतन्त्र है और छठी शती ईस्वी पूर्व में हुए वर्द्धमान महावीर इस धर्म के संस्थापक हैं, तथा यह भी कि बौद्धधर्म की भांति जैनधर्म भी तत्कालीन ब्राह्मण धर्म के विरोध में उत्पन्न हुआ एक सुधारक धर्म था। जैकोबी ने अपनी खोजों से यह निर्विवाद सिद्ध कर दिया कि जैनधर्म सर्वथा स्वतन्त्र एवं अत्यंत प्राचीन धर्म है। शनैः–शनैः 23 वें तीर्थंकर पार्श्वनाथ और 22 वें तीर्थंकर नेमिनाथ की भी ऐतिहासिकता स्वीकार कर ली गयी और यह भी माना जाने लगा कि प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव ही इस परम्परा के प्रथम पुरस्कर्ता रहे प्रतीत होते हैं तथा यह कि उसकी प्राचीनता प्राग्वैदिक काल तक ले जाई जा सकती है। वस्तुतः न केवल **भागवत** आदि ब्राह्मणीय पुराणों में ऋषभदेव को विष्णु का अष्टम अवतार घोषित किया गया है और **महाभारत**कार ने भी उनकी स्तुति की है वरन् स्वयं **ऋग्वेद** में उनके अनेक प्रत्यक्ष एवं परोक्ष उल्लेख मिलते हैं। अतएव ऋषभधर्म, आर्हतधर्म या जिनधर्म स्वतः प्राग्वैदिक सिद्ध है। इतना ही नहीं, प्राग्वैदिक, प्रागैतिहासिक, ताम्र–अश्मयुगीन सिन्धु घाटी सभ्यता के जो अवशेष मोहनजोदड़ो एवं हड़प्पा में मिले हैं, उनसे प्रकट है कि उस सुदूर युग में तथा उस क्षेत्र में दिगम्बर योगीराज वृषभ–लांछन महादेव ऋषभ की पूजा–उपासना प्रचलित थी। इस प्रकार अहिंसा एवं निवृत्ति–प्रधान आत्मवादी जैन धर्म मात्र भारतवर्ष का ही नहीं, संभवतया सम्पूर्ण विश्व में मानव का सर्वप्राचीन जीवित धर्म है।

(विषय के सम्पूर्ण विवेचन के लिए डॉ. साहब की पुस्तक Jainism, The Oldest Living Religion दृष्टव्य है। यह Jaina Cultural Research Society, वाराणसी, से 1951 में प्रकाशित हुई थी और पार्श्वनाथ विद्यापीठ, वाराणसी, द्वारा 1988 में पुनः प्रकाशित की गयी। श्री हेमन्त जे. शाह द्वारा गुजराती में अनुवाद **जैन–धर्म साहुधी वधू प्राचीन अनेजुवन्त धर्म** शीर्षक से 1979 में अहमदाबाद से प्रकाशित किया गया। हिन्दी में श्री पुलक गोयल द्वारा **जैन धर्म : प्राचीनतम जीवित धर्म** शीर्षक से अनुवाद किया गया जो अगस्त 2011 में धर्मोदय साहित्य प्रकाशन, सागर, से प्रकाशित हुआ। – सम्पादक)

समाज सुधार में धर्मगुरुओं की महत्वपूर्ण भूमिका हो

— श्री अजित प्रसाद जैन

जैन धर्म में धर्म गुरुओं का बड़ा महत्वपूर्ण स्थान है, बड़ा मान—सम्मान है, जितना कदाचित् ही किसी समाज में हो। मोक्ष मार्ग के साधक होने के कारण वे बड़े श्रद्धास्पद हैं। सतत् वीतरागता, समता, इन्द्रिय संयम तथा अपनी देह से भी विरक्तता एवं सभी प्राणियों से मैत्री भाव की साधना करने वाले इन पंच महाव्रती गुरुओं में श्रावक तीर्थंकर महाप्रभु का साधनारत प्रतिबिम्ब खोजता है तथा उनकी गिनती अर्हन्त—सिद्धों के साथ परमेष्ठियों में करता है।

आषाढ़ शुक्ल पूर्णिमा से सभी पिच्छीधारी गुरु—गुरुणी चातुर्मास स्थापना करके एक ही स्थान (नगर—कस्बे—गांव) में स्थिरावास करते हैं। जहां कहीं किसी आचार्य—मुनि—आर्यिकामाता श्री का चातुर्मास होता है वहां उनके सान्निध्य एवं प्रेरणा से हो रहे वृहद् पूजा विधान, उनके धर्म प्रवचन, धार्मिक गोष्ठियां, शोभा यात्राएं, चातुर्मास काल में पड़ने वाली उनकी तथा उनके गुरुवर्य की जन्म—दीक्षा—आचार्य पद तथा समाधि जयन्तियों को बड़े समारोहपूर्वक मनाने, अपने गुरुवर्य या स्वयं अपने द्वारा प्रायोजित करोड़ों की लागत से नवीन अतिशय क्षेत्रों के निर्माण—विकास या इसी प्रकार की अन्य भारी योजनाओं के लिए विपुल द्रव्य का दान देने के लिए श्रावकों को प्रेरणा देने, तीर्थभक्त, मुनिभक्त, धर्म शिरोमणि, दानवीर आदि के विरुद से उन्हें संबोधित कर धर्म कार्यो के लिए अधिकाधिक दान देने के लिए उत्साहित करने से समाज में अपूर्व श्रद्धा व धर्म प्रभावना का वातावरण चातुर्मास भर बना रहता है। जिन मुनिश्री/आर्यिका माताश्री का चातुर्मास जितना वैभवपूर्ण ढंग से मनाया जाता है, वह उतने ही प्रभावक मुनिराज/माताश्री गिने जाते हैं। अभी दो वर्ष पूर्व हुए एक प्रवचन कुशल प्रभावक युवा मुनि श्री के चातुर्मास काल में हुए व्यय को चातुर्मास व्यवस्था समिति के आयोजकों ने लगभग 20 लाख रुपया बताया था। इस व्यय का कोई लेखा जोखा या हिसाब किसी को नहीं देना पड़ता। अतः उत्साही कार्यकर्ताओं की भी कोई कमी नहीं रहती।

हमारे अधिकांश धर्म गुरुओं/गुरुणियों की धर्म प्रभावना की अवधारणा प्रायः उपर्युल्लिखित कार्यक्रमों तक ही न्यूनाधिक सीमित रहती है।

आज अकेले दिगम्बर जैन आम्नाय में पिच्छीधारी धर्म गुरुओं /गुरुणियों की संख्या 500 के लगभग होगी तथा उनके अकेले चातुर्मास काल पर ही समाज का अरबों का व्यय हो जाता है। हमें धर्म प्रभावना के निमित्त से किए

गए किसी भी आयोजन पर कोई आपत्ति नहीं है यद्यपि वैभवपूर्ण प्रदर्शनों से समाज का कोई भला नहीं होता। वृहद् क्रियाकाण्ड भी जैनधर्म की मूल भावना से मेल नहीं खाते।

यदि हमारे धर्म गुरु/गुरुणी, जिनके प्रति समाज में अत्यंत श्रद्धा व सम्मान है, कुछ समाज सुधार की ओर भी ध्यान दें तो उनका समाज पर स्थायी उपकार होगा। आज दहेज प्रथा के अभिशाप से जैन समाज का कम सम्पन्न विशाल वर्ग बुरी तरह से ग्रस्त है। होड़ा–होड़ी में वर पक्ष द्वारा दहेज की अधिकाधिक मांग तथा विवाह समारोह में वैभवपूर्ण प्रदर्शन से एक ही कन्या के विवाह से अनेक परिवारों की आर्थिक स्थिति ही चरमरा जाती है। परिणामस्वरूप अनेक कन्यायें बिना ब्याहे ही जीवन यापन करने के लिए विवश हो रही हैं। दहेज हत्याओं से भी यह **अहिंसा परमो धर्मः** का उद्घोष करने वाली समाज अछूती नहीं रह गयी है। यदि हमारी श्रद्धा के केन्द्र मुनि/आर्यिकामाताएं जैन समाज को कुरीतियों से उबारना भी अपने साधु जीवन का मिशन बना लें तो निश्चय ही समाज को इन कुरीतियों से उबरने में देर नहीं लगेगी और वह एक आदर्श समाज बन सकेगा।

इसके लिए हमारा उनसे विनम्र निवेदन है कि अपने प्रवचनों में वे –

1 दहेज की कुप्रथा का डटकर विरोध करें तथा युवकों व उनके अभिभावकों से दहेज न मांगने–लेने के प्रतिज्ञा पत्र भरवाएं।

2 विवाह समारोह व अन्य पारिवारिक उत्सव सादगी से मनाए जाने पर ज़ोर दें।

3 बिजली की सजावट, रोशनी व अनावश्यक साज–सज्जा पर अपव्यय रोकने की दृष्टि से तथा जैनधर्म की पहचान बनाए रखने के लिए सब विवाह कार्य दिन ही में सम्पन्न करने पर बल दें।

4 अब विवाह समारोहों में अपव्यय रोकने के लिए सामूहिक विवाह की भी प्रथा चल पड़ी है पर कदाचित् ही कोई सम्पन्न परिवार ऐसे समारोहों में सहभागी होता हो। यदि सम्पन्न परिवार इसमें अगुवाई करें तो कम सम्पन्न परिवार भी इस प्रथा को अपनाने में उत्साहित होंगे।

ये हमने केवल कुछ सुझाव दिए हैं जिन्हें अपनाकर हमारे श्रद्धेय मुनिगण एवं आर्यिकामाताएं अपने साधु जीवन का सार्थक उपयोग समाज कल्याण के लिए कर सकते हैं।

(**शोधादर्श 53**, जुलाई 2004, में प्रस्तुत स्मृतिशेष श्रद्धेय अजित प्रसाद जैन जी के ये विचार आज भी प्रासंगिक हैं। – सम्पादक) ✦✦✦

जैन पुस्तकों और पत्र–पत्रिकाओं के आवरण पृष्ठ

– श्री रमा कान्त जैन

मंदिरों में व अन्यत्र तीर्थंकर जिनदेव की जिन मूर्तियों और चित्रों का दर्शन करने का सुयोग होता है उनमें से अधिकांश पद्मासनस्थ मुद्रा की प्रतिमाएं और चित्र होते हैं। उन मूर्तियों और चित्रों में तीर्थंकर जिनेन्द्रदेव के केश प्रायः घुंघराले, सैट किये हुए, तथा चेहरा दाढ़ी–मूछ विहीन, क्लीन शेव्ड, युवावस्था का कान्तियुक्त और सौम्य मूर्तित व चित्रित रहा होता है। बचपन से यह सुनता–पढ़ता आया हूं कि हमारे 24 तीर्थंकरों में से 5 को छोड़कर शेष ने तो काफी वय हो जाने पर पर्याप्त राजसिक और गृहस्थिक सुखों का उपभोग करने के उपरान्त वैराग्य धारण कर जिन–दीक्षा ग्रहण की थी और तपश्चरण के उपरान्त कैवल्यज्ञान प्राप्त होने के अनन्तर अर्हन्त–जिंतेन्द्रिय बन मोक्ष प्राप्ति पर्यन्त दीर्घकाल तक जन–जन को आत्म कल्याण के लिये सम्बोधा था। और यह भी कि दीक्षा ग्रहण करने के पश्चात वे प्रायः पूर्णतः निर्ग्रन्थ, दिगम्बर वेशधारी, वीतरागी, परीषहजयी और अपने तन के प्रति उदासीन रहे थे। मौसम और अवस्था का भी उनके शरीर और चेहरे पर कुछ प्रभाव अवश्य पड़ा होगा। इस परिप्रेक्ष्य में यह जिज्ञासा होना स्वाभाविक है कि क्या मूर्तियों और चित्रों में प्रदर्शित तीर्थंकर भगवन्तों का यह सौम्य रूप स्वाभाविक है या काल्पनिक?

जैन तीर्थंकरों के अतिरिक्त अन्य धर्मो के इष्ट देवों – विष्णु, राम, कृष्ण, महात्मा बुद्ध और ईसा मसीह आदि की मूर्तियां और चित्र भी प्रायः सौम्य आकृति के ही दृष्टिगत होते हैं। ऐसा क्यों है, इस पर तनिक ध्यान देने पर स्थिति साफ हो जाती है। हर भक्त व्यक्ति अपने आराध्य को, इष्टदेव को, कुछ अपवादों को छोड़कर, सुन्दर–सौम्य रूप में ही देखना पसन्द करता है और उसकी इच्छानुरूप मूर्त–शिल्पी और चित्रकार उसके इष्टदेव–आराध्य को सर्वांग सुन्दर, सौम्य और युवा–कान्ति से युक्त प्रस्तुत कर देता है। जो व्यक्ति अपने को अनीश्वरवादी कहते या मानते हैं वे भी यदि सुरुचि सम्पन्न होते हैं तो अपने कक्ष और घर को सुन्दर चित्रों और मूर्तियों से सज्जित करना पसन्द करते हैं। इन बातों से एक बात साफ है कि आम आदमी हृदय से सुन्दरता–सौम्यता का पक्षधर है।

कहा जाता है कि आदिम युग में नर–नारी निर्द्वन्द्व निर्वस्त्र विचरण करते थे, किन्तु जब उनके मन को लज्जा–बोध हुआ उन्होंने अपना तन ढकना प्रारम्भ कर दिया। पेड़ों के पत्तों और छालों तथा जानवरों की खालों से चलते–चलते आज का मानव आधुनिकतम भांति–भांति के परिधानों से अपने तन को वेष्टित करने लगा है। भले ही शिशु नग्न पैदा होता है, बचपन में कुछ समय तक नंग–धड़ंग उछल–कूद करता है और प्रायः हर व्यक्ति अपने स्नानगृह में और दम्पति अपने शयनकक्ष में नग्न हो जाते हैं, सभ्यता के प्रारम्भ से जब से मानव–मन में लज्जा–बोध जागृत हुआ, कुछ जंगली जातियों और पिछड़े क्षेत्रों को छोड़कर, आम आदमी किसी अन्य के सामने निर्वस्त्र जाने में सहज संकोच करता है। नारियों की रूप–सुधा का पान करने वाले नरों की भी आज के सभ्य समाज में नारियों के नग्न अथवा अर्द्धनग्न रूप में सार्वजनिक विचरण करने पर भृकुटि तन जाती है और उनके इस मुद्रा में चित्र आदि का प्रदर्शन अश्लील समझा जाता है।

वैराग्य भाव से जिन–दीक्षा ग्रहण कर परीषहजयी, जितेन्द्रिय, वीतरागी दिगम्बर वेषधारी बनने वाले साधु भगवन्तों की बात पृथक है। भारत ही नहीं भारत के बाहर भी विश्व के अन्य देशों और मतों में नग्न साधु–सन्त महात्मा होते रहे हैं। भारत के नागा बाबा विख्यात ही हैं। ये सभी सन्त–महात्मा अपनी आम्नाय, सम्प्रदाय, भक्त समुदाय और शिष्य समुदाय के श्रद्धाभाजन होते आये हैं और होते रहेंगे, इसमें कोई विवाद नहीं है। किसी धर्म को मानना या न मानना, किसी की भक्ति करना या ना करना व्यक्तिगत आस्था का विषय है और इसका पालन करने की स्वतन्त्रता प्रत्येक को है। किन्तु इस स्वतन्त्रता की सीमा वहीं तक है जहां तक वह किसी अन्य की भावना को आहत नहीं करती। हम सब सामाजिक प्राणी हैं और अपनी धार्मिक मान्यताओं के साथ–साथ सामाजिक मार्यादाओं से भी बंधे हुये हैं।

हमारे तीर्थंकरों ने अपनी मूर्तियां और चित्र बनवाने की स्वयं प्रेरणा दी थी, यह तो हमें विदित नहीं है। उनकी मूर्तियां और चित्र कब से बनने प्रारम्भ हुए, यह भी निश्चित रूप से बताना कठिन है। चौबीसवें तीर्थंकर वर्धमान महावीर के पश्चात उनके जो गणधर और असंख्य दिग्गज जैन आचार्य और मुनि महाराज बीसवीं शती ईस्वी से पूर्व हुए उनमें से कितनों ने अपनी मूर्तियां और चित्र बनवाये, यह भी ठीक से हमारे संज्ञान में नहीं है। किन्तु 20वीं शती ईस्वी से फोटोग्राफी का आविष्कार और प्रचलन होने के उपरान्त हमारे भगवन्त

आचार्यो और मुनि महाराजों में भी अपने चित्र खिंचवाने और उन्हें प्रदर्शित व प्रचारित कराने का चलन तेजी से बढ़ा है। मैं दिगम्बर जैन धर्मानुयायी परिवार में जन्मा हूं और पारिवारिक संस्कारों के अनुसार दिगम्बर भगवन्त आचार्यो और सभी साधु–साध्वियों के प्रति स्वभावतः श्रद्धावनत हूं। मुझे उनके चित्र खिंचवाने और उन्हें प्रदर्शित–प्रचारित किये जाने पर भी कोई आपत्ति नहीं है। किन्तु कभी–कभी कोई–कोई चित्र शालीनता की सीमा का लंघन कर जाते हैं और उन्हें देखकर आंखें लज्जा से नत हो जाती है। **'शोधादर्श'** पत्रिका के सम्पादन और तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उ0प्र0, जो सभी आम्नायों की प्रतिनिधि संस्था है, द्वारा संचालित सार्वजनिक शोध–पुस्तकालय के प्रबन्धन से जुड़ा होने के नाते मुझे आये दिन अनगिनत पुस्तकों और पत्र–पत्रिकाओं से रूबरू होना पड़ता है। जब कभी समाज द्वारा प्रकाशित कोई ऐसी पुस्तक या पत्र–पत्रिका हाथ में पड़ जाती है जिसके आवरण पृष्ठ या भीतर के पृष्ठ पर प्रदर्शित साधु भगवन्तों के चित्र देखकर स्वयं अपनी दृष्टि लज्जा से नत होने लगे तब सोच में पड़ जाता हूं कि उसे पुस्तकालय, जो मात्र दिगम्बर जैन धर्मानुयायी पाठकों तक सीमित नहीं है, अपितु समग्र जैन समाज और जैनेतर समाज के पाठक जिसके लाभार्थी हैं, को कैसे भेजूं। जैसा कि मैंने आरम्भ में ही व्यक्त किया है, सुन्दरता–सौम्यता–सुरुचि मानव का सहज स्वभाव है और यह कि दिगम्बरत्व तथा किसी धर्म विशेष का पालन व्यक्तिगत आस्था के विषय हैं। सामाजिक प्राणी होने और सामाजिक मर्यादाओं की परिधि में बंधे होने के कारण हमारे द्वारा शालीनता की सीमा का लंघन किया जाना अभीष्ट नहीं है। अतः जैन प्रकाशकों और सम्पादकों को मेरा विनम्र सुझाव है कि वे पुस्तकों और पत्र–पत्रिकाओं में धर्मातिरेक या गुरु–भक्ति के अतिरेक में यथासंभव ऐसे चित्र न देवें जो शालीनता की परिधि में न आते हों और दूसरों द्वारा उपहास का विषय बन जायें। ऐसा करने से पुस्तक या पत्र–पत्रिका की गरिमा में कोई कमी नहीं आयेगी, अपितु वह बढ़ेगी ही। आशा है,, इस सुझाव पर समुचित घ्यान दिया जायेगा। इत्यलम्।

सुन्दरता–सौम्यता–सुरुचि, जब हैं सहज स्वभाव।
तब पुस्तक–पत्रिकाओं में, क्यों हो रहा अभाव।।

(ये विचार स्मृतिशेष श्रद्धेय रमा कान्त जैन ने **शोधादर्श 67**, मार्च 2009, के सम्पादकीय में व्यक्त किये थे जो आज भी प्रासंगिक हैं। – सम्पादक)

✧✧✧

दस–लक्षण पर्व

– श्रीमती इन्दु कान्त जैन

विजित जन्म जसमृति जरामृति संचयः प्रहतदारुणराग कदम्बकः।
अद्य महातिमिर व्रज भानुमान, जयति यः परमात्मपद–स्थितः।।

अर्थात् – "जिन्होंने जन्म, जरा और मृत्यु को जीत लिया है, शक्तिशाली राग के वंश को नष्ट कर दिया है, तथा जो पाप रूपी अन्धकार को नष्ट करने के लिये सूर्य के समान हैं, ऐसे परम पद में स्थित अर्हन्त् परमेष्ठी जयवन्त हो!"

आत्मा अजर, अमर और अविनाशी है, यह एक शाश्वत सत्य है जिसे प्रत्येक धर्म में स्वीकारा गया है। आत्मा अपने वास्तविक स्वरूप में पूर्णतः पवित्र, शान्त–स्वरूप और शक्तिशाली है, किन्तु शरीर रूपी वस्त्र को धारण करते ही जब आत्मा शिशु के रूप में इस संसार में आती है, तब उसकी शक्तियां सीमित दायरे में बंध जाती हैं, आत्मा मोह के बंधन में बंध जाती है और फिर धीरे–धीरे मोह–माया, छल–कपट और विषय–कषायों की दलदल में फंसती चली जाती है, इस प्रकार आत्मा अपना शुद्ध स्वरूप खो देती है। त्याग, संयम और तप द्वारा मन, वचन और कर्म को विकारों से मुक्त करके आत्मा को पुनः उसके विशुद्ध स्वरूप का ज्ञान करवाकर, मोक्ष–मार्ग की ओर अग्रसर करने का कार्य धर्म का पालन करके किया जाता है।

अन्य समाजों की भांति जैन समाज में भी समय–समय पर पर्वो का आयोजन किया जाता है। जहां अन्य धर्मो में पर्वो के आयोजन पर नये वस्त्र धारण किये जाते हैं तथा तरह–तरह के व्यंजन बनाए जाते हैं, वहीं दूसरी ओर जैन पर्वो पर व्रत–उपवास रखे जाते हैं एवं नियम–संयम धारण किए जाते हैं। इन्हीं पर्वो में एक पर्व है 'पर्युषण–पर्व'। यह दो शब्दों से मिलकर बना है – 'परि'+'उष्ण'। 'परि' का अर्थ है 'चारों ओर' और 'उष्ण' का अर्थ है 'दाह'। "परिसमन्तात् उष्यन्ते दह्यन्ते पापकर्माणि यस्मिन् तत् पर्युषणम्" अर्थात् "जिसमें चारों ओर के पाप कर्मो को दहन किया जाता है उसे 'पर्युषण–पर्व' कहते हैं।"

इसे दस–लक्षण पर्व भी कहते हैं। वैसे तो यह पर्व वर्ष में तीन बार आता है – माघ शुक्ल पंचमी से माघ शुक्ल चतुर्दशी तक, चैत्र शुक्ल पंचमी से चैत्र शुक्ल चतुर्दशी तक तथा भाद्र शुक्ल पंचमी से भाद्र शुक्ल चतुर्दशी तक, किन्तु इन तीनों में भादों मास में पड़ने वाले दस–लक्षण पर्व का विशेष महत्व है। वर्षा ऋतु का प्रारम्भ होने के कारण इन दिनों प्रकृति में नमी व्याप्त रहती है, जिससे असंख्य जीव उत्पन्न हो जाते हैं। परिभ्रमण करने से जीव हत्या न हो,

इस कारण साधु–संत जगह–जगह विचरण न करके एक ही स्थान पर निवास करते हैं। चातुर्मासिक वर्षायोग जैन मुनियों का 'पर्युषण–कल्प' कहलाता है। ऐसे में नगरों, कस्बों आदि में संतों का समागम आसानी से उपलब्ध हो जाता है। उनके प्रवचन हमें धर्म के मार्ग पर चलने की प्रेरणा देते हैं, साथ ही संतों के दिशा–निर्देश में मन्दिरों में तरह–तरह के विधान, अनुष्ठान और धार्मिक प्रतियोगिताओं के आयोजन भी होते रहते हैं। सांसारिक पीड़ा से व्यथित मनुष्य आत्मायें अपना अधिकाधिक समय धार्मिक कृत्यों में बिताकर भव सागर से तरने का प्रयत्न करते हैं। दस–लक्षण पर्व के प्रथम पांच दिन व्यक्ति को क्रोध, मान, माया, लोभ इन चारों विकारों का त्याग करना होता है और अपने अन्दर सत्य की स्थापना करनी होती है तथा अन्तिम पांच दिन संयम, तप, त्याग, आकिंचन और ब्रह्मचर्य की आराधना कर आत्मोन्नयन की ओर अग्रसर होना होता है। संयम द्वारा इन्द्रियों को वश में करने का प्रयत्न ही वस्तुतः तप है।

'धर्म' शब्द संस्कृत की 'धृ' धातु से बना है जिसका अर्थ होता है धारण करना। अतः दस–लक्षण धर्म के दस दिनों में प्रत्येक दिन क्रमशः क्षमा, मार्दव, आर्जव, शौच, सत्य, संयम, तप, त्याग, आकिंचन और ब्रह्मचर्य व्रत धारण करने का संकल्प लिया जाता है। जिनेन्द्र प्रभु के ध्यान में लीन रहकर, अपने विकारों पर विजय प्राप्त करके ही आत्म कल्याण सम्भव है। आत्म कल्याण के इस पर्व को किसी व्यक्ति अथवा जाति विशेष की परिधि में नहीं बांधा जा सकता है। डॉ0 ज्योति प्रसाद जैन जी के अनुसर "पर्युषण–पर्व का अर्थ है पर भावों से विरत होकर स्वभाव में रमण करना, अर्थात् बाह्य दृष्टि का परित्याग करके अन्तर्मुखी बनना।"

हमारे तीर्थंकरों ने जिस पथ का अनुसरण करके मोक्ष पद प्राप्त किया, उन्हीं संदेशों की याद दिलवाने हर वर्ष **"दस–लक्षण पर्व"** आता है। इन दस दिनों के दस संकल्पों की अवधारण ही आत्म–कल्याण के दस चरण है।

उत्तम छिमा, मारदव, आरजव भाव हैं,
सत्य, शौच, संयम, तप, त्याग उपाव हैं,
आकिंचन, ब्रह्मचर्य धरम दश सार हैं,
चहुंगति दुखतैं काढ़ि मुकति करतार हैं।

बंसी कुटी, गुबरैला स्ट्रीट, 21, दुली मोहल्ला, फिरोजाबाद–283203

✧✧✧

भज लो चौबीसी जिन राज

(तर्ज : जब तुम्हीं चले परदेश)

– **श्री लूणकरण नाहर जैन**

भज लो चौबीसी जिनराज, धरम की जहाज, तीर्थंकर प्यारा।
जिनका है हमें सहारा।।
ऋषभ अजित सम्भव अभिनन्दन सुमति पद्म सुपास जिनंद।
चन्दा प्रभुजी लगते हमको प्यारा, जिनका है हमें सहारा।।

सुविधि नाथ प्रभु गुण गायेंगे, शीतल को शीश झुकायेंगे।
श्रेयांस वासुपूज्य जीवन के आधारा, जिनका है हमें सहारा।।

विमल विमल मति बनायेंगे, अनन्त धर्मनाथ को ध्यायेंगे।
श्री शान्ति शान्ति दाता जग में न्यारा, जिनका है हमें सहारा।।

कुंथुनाथ को शीश नवाते हैं, अरनाथ के हम गुण गाते हैं।
मल्लिनाथ सुव्रत करते भव से पारा, जिनका है हमें सहारा।।

नमिनाथ प्रभु निराले हैं, रिष्ठनेमी सबके सहारे हैं।
पशुओं का क्रन्दन सुन के संयम धारा, जिनका है हमें सहारा।।

पारस प्रभु चिन्ता हरते हैं, जीवन में खुशियां भरते हैं।
महावीर के सुमरण से कटे कर्म–जंजाला,
जिनका है हमें सहारा।।

बीस विहरमान गुणगान करें, गणधर जीवन कल्याण करें।
'नाहर' जीवन में गुरुवर करें उजियारा, जिनका है हमें सहारा।

नाहर निकेतन, 514, राजेन्द्र नगर, लखनऊ–226004

✦✦✦

बोलिये! कैसे बचेगा धर्म

— डॉ. परमानन्द जड़िया

कार बंगलों की लगी है होड़,
संत भी बैठे तपस्या छोड़।
रात दिन पूंजी रहे हैं जोड़,
सत्य–निष्ठा ने लिया मुख मोड़।।

बोलिये! कैसे बचेगा धर्म,
कर रहें सब लोग कुत्सित कर्म।
खींच निर्बल का रहे हैं चर्म,
घूस भी लेते न आती शर्म।।

अब न गांधी का अहिंसा सत्य,
जैन मुनियों सा न अनुपम कृत्य।
शुद्ध सात्विक आचरण का नृत्य –
अब कहां! मानव सुखों का भृत्य।।

जा रहे मंत्री विधायक जेल,
बन गयी गुण्डागिरी है खेल।
लिख रहे साहित्य हैं बदफेल,
फूलने फलने लगी विष–बेल।।

लेखनी लिखकर गयी है हार,
रुक न पाया मांस का व्यापार।
है प्रदूषित जान्हवी की धार,
प्यार भी है बन गया व्यभिचार।।

अब शिविर में बंट गया साहित्य,
वार्ता में है नहीं लालित्य।
अग्नि बरसाने लगे आदित्य,
हो रहा संग्राम पथ पर नित्य।।

देखिये! हैं प्राण संकट–ग्रस्त,
दीन दुर्बल हैं सभी संत्रस्त।
हौंसले सद्धर्भ के हैं पस्त,
बोलिये! जायें कहां सन्यस्त।।

जड़िया निवास, 189/51, खत्री टोला,मशक गंज, लखनऊ –226018

गीत

जीवन चलता फिरता मेला

– श्री कृपाशंकर शर्मा "अचूक"

मेरे कब तक साथ चलोगे, मुझको चलना अन्त अकेला
जाते–जाते इतना जानो, जीवन चलता फिरता मेला

हाथों की रेखाएं अब तो
अर्थहीन सारी की सारी
सपनों में नित मोती मिलते
आंख खुले रोती बेचारी
तारकोल सी दिखे अवस्था, सदियों से ही इसको झेला
मेरे कब तक साथ चलोगे, मुझको चलना अन्त अकेला

भूल गये अतीत भी सारा
वर्तमान की बात कहें क्यों
आगत पाती बांचे कोरी
किस किस का आघात सहें क्यों
छेनी से संपर्क जब मिला, बदल गया प्रस्तर का ढेला
मेरे कब तक साथ चलोगे, मुझको चलना अन्त अकेला

बुझे दिए कह रहे सभी से
मावस के घर जोति लुटाई
जंग लगी भी कहती छेनी
मन्दिर प्रतिमा काम न आई
कैसी चाल 'अचूक' चलाई, खेल आज यह कैसा खेला
जाते जाते इतना जानो, जीवन चलता फिरता मेला

38–ए, विजय नगर – 1, करतारपुरा, जयपुर–302006

✧✧✧

गोचर–अगोचर

– श्री अमरनाथ

समुद्र में डूबते एक शराबी को –
जान पर खेलकर, जैसे ही बाहर निकाला –
एक लहर मेरे चरण धोकर चली गई।।

भूख से तड़पते भिखारी को –
जैसे ही अपना भोजन का थाल सरकाया –
शीतल समीर का झोंका, मेरे बालों को सहला गया।।

बलात्कारियों के चंगुल से –
जैसे ही महिला को आजाद कराया –
बादलों को चीरता हुआ इन्द्रधनुष उगा,
और मुझे देखकर मुस्कराया।।

चलते चलते, राह में पड़े टिटहरी के अंडों को –
अचानक पैर पड़ने से टूटने से बचाया –
पृथ्वी ने मेरे तलवों को सहलाया,
एक शीतल अहसास देकर।।

आग में धूं–धूं जलते मकान से –
एक बछड़े को बचाते ही, आग की एक तेज लपट ने –
मेरे माथे को चूमा और अग्नि तिलक से
मेरा अभिनन्दन किया ।।

पृथ्वी, जल, वायु, आकाश और अग्नि –
शरीर के ये पांचों तत्व, चलते हैं साथ–साथ हमेशा –
शरीर के बीजतत्वों को मानवता की पहचान कराने के लिए।
उस अगोचर को गोचर बनाने के लिए।।

401–ए, उदयन 1, बंगला बाजार, लखनऊ 226002

✦✦✦

गीत

दीप बन मैं जल रहा हूं

– श्री मुक्तेश जैन 'सरस'

दीप बन मैं जल रहा हूं।
जगत के तम पाप से डूबी निशा है
आज शंकित भ्रमित हर मन की दशा है
अब नहीं विश्वास का आधार कोई
भग्न संस्कृति देश की यह दुर्दशा है
भोर लाने हेतु तिल–तिल गल रहा हूं।
दीप बन मैं जल रहा हूं।।

आज भ्रष्टाचार–शिष्टाचार बन कर
देह की रग–रग में ऐसा बस गया है
इस धरा पर थी कभी जो पूज्य नारी
रावणों से हरण का डर बढ़ गया है
दुष्ट का विध्वंस करने कृष्ण आयें
आस में प्रतिपल जी रहा हूं।
दीप बन मैं जल रहा हूं।।

पंच तत्वों से बनी है देह मेरी
स्नेह जीवन प्राण की बाती लिये मैं
सूर्य का हूं वंश, जलना नियति मेरी
अघ तिमिर से युद्ध की थाती लिये मैं
ले विरासत पूर्वजों की, घोर तम से लड़ रहा हूं।
दीप बन मैं जल रहा हूं।।

सरस साहित्य सदन, शीतल ज्वैलर्स, कुरावली–205265

✦✦✦

सरस्वती वन्दना

— श्रीमती स्वर्णलता श्रीवास्तव

हे हंस वाहिनी जगदम्बे, तेरा ही एक सहारा है। —2
तुम जल में मां, तुम थल में मां, तुम कण—कण में दर्शाती हो,
तुम दयामयी मूरत हो मां, जगदम्बा नाम तुम्हारा है। हे हंस ....

मेरी विपदाओं को दूर करो, करुणा दृष्टि इस ओर करो,
संकट के बीच घिरी हूं मां, आशा से तुम्हें पुकारा है। हे हंस........

भव बाधाएं हरने वाली, जन—जन की बाधा हरती हो,
मेरी बाधाएं अब दूर करो, जग जननी ये काम तुम्हारा है। हे हंस.

मुझ में अवगुण हैं बड़े—बड़े, तुम अवगुण दूर भगाती हो,
तुम ममता की मूरत हो मां, जगदम्बा नाम तुम्हारा है। हे हंस..........

मैंने बहुतेरे पाप किये, तुम पापों से हमें बचाती हो,
तुम करुणा की सागर हो मां, जगदम्बा नाम तुम्हारा है। हे हंस...

हम बालक कब से दर पे खड़े, आकर के दे दो दरश हमें,
हम बालक सभी तुम्हारे हैं, जगदम्बा नाम तुम्हारा है। हे हंस........

कौमारी सरस्वती हो तुम, वैष्णवी तुम्ही ब्रह्माणी हो,
कर शंख, चक्र और पद्म लिए, लक्ष्मी भी रूप तुम्हारा है।
हे हंस वाहिनी जगदम्बे, तेरा ही एक सहारा है।

303, बशीरत गंज, लखनऊ—226004

✦✦✦

जैन मूर्तिकला में गणविघ्नेश का अंकन

– डॉ. ए. एल. श्रीवास्तव

समाधिना योगिनो यत्र गच्छन्ति इति 'गः'।
यस्मात् बिम्बप्रतिबिम्बवत्तया प्रणवात्मकं जगज्जायते इति 'जः'।

अर्थात् 'समाधि के माध्यम से योगीजन जिस परम तत्व को प्राप्त करते हैं वह 'ग' है और जिस प्रकार बिम्ब से प्रतिबिम्ब उत्पन्न होता है उसी प्रकार कार्य–कारण स्वरूप प्रणवात्म जगत जहां से उत्पन्न होता है वह 'ज' है। जगत रूप भक्तों पर अनुकम्पा के लिए परब्रह्म की कल्पना नरगज के रूप में हुयी।'

महामहोपाध्याय बलदेव उपाध्याय के अनुसार 'गज' साक्षात् ब्रह्म को कहते हैं। ऐसे ब्रह्मरूपी गणेश का भारतीय जीवन में अत्यंत पूजनीय और लोकप्रिय स्थान है। वैदिक उद्भव और पौराणिक विकास के फलस्वरूप गणेश गुप्त काल से समादृत हुए और कुछ ही समय बाद वे पंचदेवोपासना में सम्मिलित कर लिए गये। **शब्दकल्पद्रुमकोश** में लिखा है –

आदित्यं गणनाथं च देवीं रुद्रं च केशवम्।
पंचदैवतमित्युक्तं सर्वकर्मसु पूजयेत्।।

कपिलतंत्र में भी इसकी परिपुष्टि होती है। उसमें कहा गया है कि विष्णु, माहेश्वरी, सूर्य और शिव कमशः आकाश, अग्नि, वायु और पृथ्वी के स्वामी हैं, किन्तु गणेश तो साक्षात् जीवन के स्वामी हैं – 'आकाशस्याधियो विष्णुरग्नेश्चैव महेश्वरी, वायोः सूर्यः क्षितेरीशो जीवनस्य गणाधिपः।' गणेश का स्तवन तो प्रत्येक शुभ कार्य में प्रथमतः किया ही जाता है, पंचदेवों–समेत उनकी स्तुति यात्रारंभ में भी की जाती है – 'सदाभवानी दाहिनी सन्मुख रहें गनेश, पांच देव रक्षा करें, ब्रह्मा विष्णु महेश।' ऐसे विघ्नविनाशक, बुद्धिप्रदाता, ऋद्धि–सिद्धि दाता और सर्वमांगल्य के देवता गणेश न केवल गणपति सम्प्रदाय में अपितु शैव, वैष्णव, शाक्त, बौद्ध तथा जैन आदि सभी सम्प्रदायों में समानरूप से लोकप्रिय हो गये और अग्रपूज्य बने। प्रस्तुत लेख में जैन विचारधारा और मूर्तिकला में गणेश–विषयक संक्षिप्त विवेचन दिया गया है।

वस्तुतः जैन सम्प्रदाय निरीश्वरवादी होते हुए भी घोर ईश्वरवादी ब्राह्मण धर्म की ओर आकृष्ट हुआ। इस आश्चर्यजनक तथ्य की पुष्टि जैन ग्रंथों में उपलब्ध तथ्यों से होती है। वैष्णव सम्प्रदाय के अवतारवाद ने तो जैन सम्प्रदाय को अत्यधिक प्रभावित किया था। इसका एक महत्वपूर्ण कारण यह भी था कि जैन धर्म या सम्प्रदाय के असंख्य उपासक मूलतः ब्राह्मण धर्मावलम्बी ही थे। चूंकि गणेश अत्यंत जनप्रिय देवता थे, इसलिए उनके मंगलमय स्वरूप ने जिस प्रकार बौद्ध धर्मानुयायियों को आकर्षित किया उसी प्रकार जैन मतावलम्बी भी उस आकर्षण से बच नहीं पाये। **गणेश** की लोकप्रियता ठीक लक्ष्मी के समान थी। दोनों मांगल्य के, **ऋद्धि–सिद्धि** के देव थे। संभवतः इसी गुण साम्य के कारण दीपावली को दोनों की पूजा साथ–साथ की जाती है।

गुप्तकाल के बाद जैन धर्म में ब्राह्मण धर्म के अनेक देवी–देवता सम्मिलित कर लिए गये थे। इनमें गणेश भी थे। जैन ग्रंथ **आचारदिनकर** (गणपति प्रतिष्ठा 3) तथा **अभिधानचिन्तामणि** (देवखण्ड, द्वितीय सर्ग 270) में विघ्नविनाशक और सिद्धिप्रदायक रूप में गणेश की प्रतिष्ठा का उल्लेख पाया जाता है। **आचारदिनकर** में उन्हें गजानन, तुन्दिल तथा चार, छः, अठारह और एक सौ आठ भुजाओं वाला बताया गया। किन्तु आयुध केवल पारम्परिक चार ही गिनाए गये – दाहिने हाथों में वरद मुद्रा एवं परशु, और बाएं हाथों में अभय तथा मोदक पात्र। प्रतिमाशास्त्र तथा प्रतिमाओं में भी गणेश को प्रायः चतुर्भुज ही अंकित किया गया है। **अभिधानचिन्तामणि** में गणेश को हेरम्ब, विनायक और गणविघ्नेश कहा गया है तथा उनको हस्तिमुख (गजमुख) तथा निकले पेट वाले (तुन्दिल या महाकाय) स्वरूप का निरूपित किया गया है।

दिगम्बर परम्परा की अपेक्षा जैनों की श्वेताम्बर परम्परा में गणेश को अधिक महत्व दिया गया था। उड़ीसा में भुबनेश्वर के निकट उदयगिरि–खण्डगिरि की गुफाओं में गणेशगुम्फा तथा नवमुनिगुम्फा में गणेश का अंकन एक मात्र दिगम्बर परम्परा का उदाहरण कहा जा सकता है। नवमुनिगुम्फा के लगभग ग्यारहवी शती के गणेश को चतुर्भुज बनाया गया है। उनके हाथों में मोदक पात्र, परशु, अक्षमाला तथा नीलोत्पल हैं। उनके वाहन मूषक का भी अंकन प्रदर्शित है।

श्वेताम्बर जैन परम्परा में गणेश के कई अंकन पाए गए हैं जो उनकी अधिक लोकप्रियता का प्रमाण प्रस्तुत करते हैं। ये सभी अंकन राजस्थान के ओसिया (जनपद जोधपुर), कुम्भारिया तथा नारलाई (जनपद पाली) नामक स्थानों से मिले हैं। ओसिया के जैन मन्दिरों की देव–कुलिकाओं में देवी–देवताओं की मूर्तियां हैं। देव कुलिका (लगभग ग्यारहवीं शती) में गणेश की तीन मूर्तियां हैं – दो पश्चिम की ओर स्थित देव कुलिकाओं में तथा एक दक्षिण की ओर स्थित देव कुलिका में। इन मूर्तियों में गणेश को ललितासन में बैठे दिखाया गया है। वे चतुर्भुज हैं। उनकी सूंड़ मोदक पात्र पर टिकी बनायी गयी है। ओसिया–मंदिर के ही अधिष्ठान पर बनी गणेश की मूर्ति चतुर्भुज है और उनके हाथों में जो आयुध हैं वे अन्य मूर्तियों से भिन्न हैं। ये आयुध हैं स्वदन्त, परशु, नीलोत्पल तथा एक अन्य अस्पष्ट आयुध। गणेश ने सर्पयज्ञोपवीत धारण किया हुआ है और उनके पार्श्वों में दो–दो भक्त अंजलिबद्ध मुद्रा में उत्कीर्ण हैं।

कुम्भारिया में बारहवीं शती में निर्मित नेमिनाथ मंदिर के अधिष्ठान की एक रथिका में गजानन गणेश की एक मूर्ति है। करण्डमुकुट, उदरबन्ध, सर्पयज्ञोपवीत तथा अन्य आभूषणों से अलंकृत इस मूर्ति के हाथों में परशु, पद्म, मोदकपात्र तथा स्वदन्त हैं। नारलाई में गणेश के दो मूर्तांकन हैं – एक नेमिनाथ मंदिर के प्रवेशद्वार के निकट और दूसरा सुपार्श्वनाथ मंदिर के परिसर में। नेमिनाथ मंदिर वाले चतुर्भुज गणेश के हाथों में मोदक पात्र और पद्म के अतिरिक्त अन्य आयुध अस्पष्ट हैं। वाहन के रूप में मूषक का अंकन दृष्टव्य है। सुपार्श्वनाथ मंदिर के परिसर में पड़ी मूर्ति द्विभुज है। इस मूर्ति के हाथों में गदा और अंकुश है।

राजस्थान की ये गणेश–मूर्तियां वैसे तो प्रतिमाशास्त्र के अनुरूप ही गढ़ी गयी थीं तथापि उनमें कुछ विलक्षणता है। ओसिया की एक गणेश–प्रतिमा में वाहन मूषक के स्थान पर हाथी बनाया गया है और इसी प्रकार नारलाई के सुपार्श्वनाथ मंदिर के परिसर वाली मूर्ति में वाहन मेष को दिखया गया है।

डॉ. प्रतापादित्य पाल के अनुसार जयपुर के दिगम्बर मंदिर के ग्रंथालय में संरक्षित यक्ष प्रतिमाओं में एक अश्वारोही भी है जिसके पादपीठ पर 'पूर्णभद्र' नाम उत्कीर्ण है। पाल पूर्णभद्र को हिन्दू तथा बौद्ध परम्परा के

समान जैन परम्परा में भी मान्य बताते हैं। श्री एवं श्रीमती हैरी लैनार्ट द्वारा भेंट में प्रदत्त अश्वारोही गणेश का एक चित्र अमरीका के लॉस एंजिलिस काउण्टी म्यूजियम में संरक्षित है। पाल ने उस अश्वारोही गणेश को जयपुर के जैन दिगम्बर मंदिर की अश्वारोही प्रतिमा के आधार पर पूर्णभद्र मानकर प्रकाशित किया है (The Peaceful Liberators from India, Los Angeles, 1996, पृ.190, चित्र पृ. 191 पर)। वह चित्र नीचे दिया जा रहा है –

हाथी, अश्व और मेष न तो अन्यत्र किसी गणेश प्रतिमा में बनाए गये हैं और न ही शिल्पशास्त्र में उनके बनाये जाने का कोई विधान है। और तो और, गणेश सम्बन्धी विपुल साहित्य में भी इन वाहनों का कोई उल्लेख नहीं मिलता है। शायद जैन साहित्य भी इस सन्दर्भ में मौन है। वाहन के रूप में गणेश की इन मूर्तियों में हाथी, अश्व और मेष को अपवाद भले ही कह दिया जाये पर उनका अंकन विचारणीय और विश्लेषणीय अवश्य है।

1 बी, स्ट्रीट 24, सेक्टर 9, भिलाई–490009 (म.प्र.)

(लेखक प्राचीन भारतीय इतिहास एव संस्कृति के अवकाश–प्राप्त प्रोफेसर हैं और भारतीय प्रतिमाशास्त्र एवं मूर्ति कला के मर्मज्ञ वरिष्ठ विद्वान हैं। – सम्पादक)

भांडासर जैन मंदिर

– श्री ललित कुमार नाहटा

बीकानेर नगर के सबसे विशाल, सर्वोच्च शिखर वाले, भव्य एवं कलात्मक तीन मंजिले श्री सुमतिनाथ जैन मंदिर जो भांडासर मंदिर के नाम से प्रसिद्ध है, को प्रतिष्ठा क्रम से इस नगर का द्वितीय प्राचीनतम मंदिर माना जाता है। प्रथम मंदिर चौथे दादागुरु श्री जिनचन्द्रसूरि द्वारा वि. सं. 1561 में प्रतिष्ठित परमात्मा ऋषभदेव जी का 'श्री चिंतामणि जैन मंदिर' है। किंवदंती है कि इस दूसरे मंदिर का निर्माण कार्य बीकानेर राज्य की स्थापना के पूर्व ही लगभग विक्रम संवत् 1525 में तत्कालीन जांगलू नामक प्रदेश में सेठ भांडाशाह ने प्रारम्भ किया था। सेठ श्री भांडाशाह का आकस्मिक देहावसान हो जाने के कारण प्रतिष्ठा में विलंब हुआ व 7 मंजिले मंदिर को तीन मंजिल का ही बनाकर प्रतिष्ठा करवाई गयी जो 46 वर्षो बाद आसोज शुक्ल–2 वि. सं.1571 में प्रतिष्ठित हुआ। मंदिर निर्माण सम्बन्धी शिलालेख में उल्लेख है–

संवत् 1571 वर्षे, आसोज सुदि 2 खौ,
राजाधिराज लूणकरणजी विजय राज्ये
शाह भांडा, प्रासाद नाम त्रैलोक्य दीपक
करावितं, सूत्र गोदा कारित।

महोपाध्याय विनयसागर जी लिखित नाकोड़ा तीर्थ के इतिहास से प्राप्त जानकारी के अनुसार खरतरगच्छीय आचार्य जिनकीर्ति रतनसूरिजी ने नाकोड़ा नगर के सूखे तालाब तल से पार्श्वनाथ की मूर्ति प्रकट की तथा उसे एवं भैरवदेव को वर्तमान स्थान पर स्थापित किया। इनके भाई के पुत्र का नाम मालाशाह था। मालाशाह के चार पुत्र हुए सांडाशाह, भांडाशाह, तूंडाशाह और सूंडाशाह। इनका गौत्र संखवाल था।

सेठ भांडाशाह ने नगर के चारों ओर मीलों लम्बे क्षेत्र में सर्वोच्च स्थान का चयन कर उस पर इस विशाल मंदिर का निर्माण करवाया था। समतल भूमि से मंदिर के शिखर की ऊंचाई 108 फीट है व अन्दर की फर्श से 81 फीट ऊंचा है। दीवारों की मोटाई 8 से 10 फीट है। 10–15 मील दूर से मंदिर का शिखर दिखाई देता है। बीकानेर के सबसे ऊंचे भवन/मंदिर होने का गौरव इसे प्राप्त है व आज भी यह अपने मूल स्वरूप में है। इसकी तीसरी मंजिल से पूरे बीकानेर शहर का दिग्दर्शन होता है।

कहते है कि इसकी नींव की गहराई चार हाथियों की ऊंचाई जितनी है। पूरी टेकरी पर चारों तरफ उस समय उपलब्ध रोड़ा (चूने के पत्थर) की तह जमाई हुई है। मंदिर की उमर हजारों साल रहे इसके लिए खरी गांव, जैसलमेर से ऊंट गाड़ी से लाल पत्थर मंगवाया गया एवं इसके निर्माण के लिये सारा पानी नाल नामक गांव के तालाब से लाया जाता था, जो भांडासर मंदिर से 8 मील दूर था, क्योंकि बीकानेर का पानी खारा था।

शिल्पकार ने भरत मुनि के नाट्य शास्त्र से सम्बन्धित वाद्ययंत्रधारि व नृत्यरत देवांगनाओं की मूर्तियों को गढ़ने में अपने हृदय और मस्तिष्क की एकाग्रवृत्ति से छैनी और हथौड़ी की सहायता से सजीवता प्रदान करने का सफल प्रयास किया है। मंदिर के अधिष्ठायक देव भैंरू हैं, इससे यह प्रमाणित होता है कि मंदिर का सम्बन्ध खरतरगच्छीय परम्परा से है।

अपनी दुकान में बैठे घी व्यापारी भांडाशाह जब मुख्य कारीगर गोदा से मंदिर निर्माण की योजना बना रहे थे तब एक मक्खी घी के बर्तन में गिर गयी। भांडाशाह ने उस मक्खी को निकाल अपनी जूती पर रख दिया व अंगुलियों में लगा घी भी जूती पर लगा दिया। गोदा ने सोचा यह मक्खीचूस सेठ क्या सप्त मंजिला मंदिर बनायेगा, अतएव गोदा ने कहा – "सेठ जी, मंदिर सुदृढ़ व दीर्घायु हो इसलिए नींव में 1000 मन घी डालना आवश्यक है।"

सेठ ने दूसरे दिन ऊंट व बैलगाड़ी पर गोदा के कहे अनुसार घी भेज दिया व नींव में डलवाना शुरू कर दिया। तब गोदा ने कहा – "सेठ जी, यह तो मैं आपकी परीक्षा ले रहा था।" इतना कह कर उसने मक्खी वाली घटना सुनाई व कहा कि घी आप वापस ले जायें। तब सेठजी ने कहा कि नींव निमित्त आया घी तो नींव में ही जायेगा, रही बात मक्खी वाली तो इसके पीछे यही कारण था कि घी से सनी मक्खी रास्ते में डालता तो चींटियां आती व किसी के पैरों के नीचे आ जातीं, अतएव हिंसा न हो इस दृष्टि से ऐसा किया । आज भी गर्मी के दिनों में मंदिर के फर्श की जोड़ों से घी की चिकनाई रिसती है।

बीकानेर के सुप्रसिद्ध चित्रकार मुरादबक्स ने वि. सं. 1960 से लगातार कई वर्षो तक काम करके इसे सुसज्जित किया। सभामंडप के गुम्बज में

सुजानगढ़ का मंदिर, पाटलिपुत्र के राजा नंद के समय स्थूलिभद्र स्वामी दीक्षा, संभूतिविजयजी की चातुर्मासार्थ आज्ञा वितरागादी, भरत बाहुबलि युद्ध, ऋषभदेव के सौ पुत्र के प्रतिबोध, दादाबाड़ी, धन्नाशालीभद्र चरित्र के तीन चित्र, विजयसेठ विजयासेठानी के दो चित्र, इलाची पुत्र, सुदर्शन सेठ के चरित्र के दो चित्र तथा समवसरण – इस प्रकार के सोलह चित्र हैं। इसके नीचे कार्नीस पर बीकानेर विज्ञप्ति पत्र का सम्पूर्ण चित्र है। इनके ऊपर गुम्बज के प्रथम आवर्त में नेमिनाथ भगवान की बारात के 8 बड़े चित्र हैं – समुद्रविजयजी, बारात, उग्रसेन राजा का महल, राजुल सहसाम्रवन, प्रभु का गिरनार गमन, पशुओं का बाड़ा, रथ फिराना, कृष्ण–बलभद्र इत्यादि। गुम्बज के आवर्त में दादासाहब के जीवन चरित्र से सम्बन्धित 16 चित्र हैं जिनमें जिनचन्द्रसूरिजी का अकबर मिलन, अमावस की पूनम, पंचनदी साधन तथा जिनचन्द्रसूरिजी के अवशिष्ट जीवन सम्बन्धी चित्र हैं। गुम्बज के सबसे ऊंचे भाग के 16 चित्र तीर्थंकरों के जीवन चरित्र से सम्बन्धित हैं। इनमें महावीर स्वामी का चंडकौशिक उपसर्ग, संबल–कंबल, चंदनबाला, पार्श्वनाथ कमठ उपसर्ग, नेमिनाथ शंखवादन, 14 राजलोक, मेरूपर्वत, केवलज्ञान व निर्वाण कल्याणकादि के भाव अंकित हैं।

मंदिर के प्रवेश द्वार पर प्रभु का जन्माभिषेक चित्रित है। बाहरी गुम्बज पर जैनाचार्यो के चित्र हैं – जैसे गौतमस्वामी की अष्टापद यात्रा, अमल क्रीड़ा, नरक यातना, महावीर उपसर्ग, पार्श्वनाथ कमठोपसर्ग, जंबू चरित्र, इलापुत्र, वंकचूल चरित्र, मधुविदु, रोहिणियां चोर, समवसरण, ग्वालिये का उपसर्ग, श्रीपाल चरित्र के 10 चित्र, चम्पापुरी, पावापुरी, सम्मेतशिखर तीर्थ, जम्बू वृक्ष एवं इन्द्र–इन्द्राणी आदि के अनेकों चित्र हैं। चित्रों में स्वर्ण का प्रयोग किया गया है। इस मंदिर को यदि जैन कथा साहित्य सम्बन्धी चित्रों का संग्रहालय कहा जाये तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी।

'भारतीय पुरातत्व विभाग' ने सन् 1951 में इसे राष्ट्रीय महत्व का संरक्षित स्मारक घोषित किया। इसका स्वामित्व व प्रबन्धन 'श्री चिन्तामणि जैन मंदिर पन्यास' के पास है व इसके अध्यक्ष श्री निर्मल कुमार धाड़ीवाल व अन्य पदाधिकारियों के कुशल नेतृत्व में इसका उचित रख रखाव हो रहा है।

21, आनन्द लोप, अगस्त कान्ति मार्ग, नई दिल्ली–110049

✧✧✧

कर्म–प्रकृतियों का रूपान्तरण–परिवर्तन

– डॉ. रत्नलाल जैन

कर्म की प्रकृति

उत्तरज्झयणाणि के अनुसार –

रागो य दोसा वि य कम्म बीयं,
कम्मं च मोहप्प भवं वयंति।
कम्मं च जाई मरणस्स मूलं,
दुक्खं च जाई मरणं वयंति।। 32.7।।

अर्थात्, राग और द्वेष कर्म के बीज हैं। कर्म मोह से उत्पन्न होता है। कर्म जन्म–मरण का मूल है। जन्म–मरण से दुःख होता है।

क्रोध और मान द्वेष–रूप हैं, माया एवं लोभ – ये दानों राग के रूप हैं। कर्म के परमाणु–आत्मा के साथ राग और द्वेष के कारण संश्लिष्ट हो जाते हैं।

परमात्म प्रकाश में कहा गया है :

'विसय कसायहिं रगियहं जे अणुया लग्गंति।
जीव–पयसहं मोहियहंते जिण कम्मं भण्णंति' ।। 1.62।।

अर्थात्, आत्मा की राग–द्वेषात्मक क्रिया से आकाश प्रदेशों में विद्यमान अनन्तानन्त कर्मो के सूक्ष्म पुद्गल–परमाणु चुम्बक की तरह आकर्षित होकर आत्म प्रदेशों के साथ संश्लिष्ट हो जाते हैं – मिल जाते हैं, उन्हें ही कर्म कहते हैं।

'जब प्राणी मन, वचन और काया से किसी भी प्रकार की प्रवृत्ति करता है, तब चारों ओर से कर्म–योग्य पुदगल–परमाणुओं का आकर्षण होता है। समूचे आकाश–मंडल में कर्म की वर्गणायें व्याप्त हैं। इन कर्म–वर्गणाओं से एक सूई जितना अंश भी खाली नहीं है। सम्पूर्ण आकाश खचाखच भरा हुआ है। हम ने जिस प्रकार भाव–चित्त क्रिया का निर्माण किया, हमारी जिस प्रकार की राग–द्वेषात्मक अनुभूतियां हुयीं, हम वहीं बैठे–बैठे अपने आस–पास के आकाश–मंडल से उन पुद्गलों को टान लेते हैं। टान लेने के बाद वे पुद्गल हमारे प्रभाव क्षेत्र में आ जाते हैं। क्षण भर पहले जो आकाश में व्याप्त थे, वे पुद्गल परमाणु अब हमारे प्रभाव क्षेत्र में

आ गए। उनका पहले हमारे साथ सम्बन्ध स्थापित नहीं था, किन्तु जैसे ही भाव-चित्त बना, आस-पास के पुद्गल आकर्षित हुए या आकर्षित किए गए। वे पुद्गल हमारे आस्रव के द्वारा, भाव कर्म के द्वारा, भाव चित्त के द्वारा आकर्षित होकर हमारे प्रभाव क्षेत्र में आ गए। उनके साथ हमारा सम्बन्ध स्थापित हो गया, यह है कर्म-बंध।

आस्रव कर्म-बंध का हेतु

वाचकवर्य उमास्वाति ने **तत्त्वार्थसूत्र** में कर्म-बंध के पांच हेतु माने है : मिथ्यादर्शनाविरति प्रमाद कषाय योगा बंध हेतवः। **ठाणं** और **समवायांग** में भी कर्मबंध के पांच हेतु माने गये हैं। ये पांच हेतु हैं – मित्थ्यात्व, अविरति, प्रमाद, कषाय और योग।

कर्म प्रकृतियों के आठ भेद

ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, वेदनीय, मोहनीय, आयु, नाम, गोत्र और अन्तराय – आठ प्रकार के कर्म हैं।

ये आठों कर्म सिद्धों के आठ गुणों (अनन्त ज्ञान, अनन्त दर्शन, अनन्त सुख, क्षायिक सम्यकत्व, अकषायत्व रूपचारि, जन्म-मरण रहितता या अवगाहनत्व, अशरीरत्व या सूक्ष्मत्व, और नीच-ऊंच रहितता अथवा अगुरु लघुत्व) पर आवरण डाल देते हैं।

ज्ञानावरणीय कर्म – जिसके द्वारा जाना जाता है वह ज्ञान है। जैसे वस्त्र सूर्य के प्रकाश को आवृत्त करता है, वैसे ही जो पुद्गल स्कन्ध ज्ञान को आवृत्त करता है, वह ज्ञानावरणीय है।

दर्शनावरणीय कर्म – जिसके द्वारा देखा जाता है, वह दर्शन है। यह सामान्य अर्थबोध है। जैसे द्वारपाल राजा के दर्शन करने में बाधा डालता है वैसे ही जो पुद्गल स्कन्ध दर्शन को आवृत्त करता है, वह दर्शनावरणीय है।

मोहनीय कर्म – जैसे मदिरापान किए हुए मनुष्य की चेतना विकृत या मूर्च्छित हो जाती है, वैसे ही जो कर्म-पुद्गल चेतना को मूर्च्छित या विकृत बनाता है, वह मोहनीय कर्म है।

वेदनीय कर्म – जैसे मधु से लिपटी तलवार की धार को चाटने से स्वाद भी आता है और जीभ भी कट जाती है, वैसे ही जो पुद्गल सुख और दुःख दोनों के संवेदन के हेतु भूत बनते हैं, उनका नाम वेदनीय कर्म है।

आयुष्य कर्म – जैसे बेड़ी से बंधा हुआ आदमी नियत स्थान से प्रतिबद्ध रहता है, वैसे ही आयुष्य के पुद्गल नरक आदि किसी एक गति से प्राणी को प्रतिबद्ध करते हैं।

नाम कर्म – जो गति–जाति आदि से प्राणी–विशेष को निर्दिष्ट करता है, वह है नाम कर्म। जैसे चित्रकार हाथी–घोड़े आदि का रेखांकन करता है, वैसे ही जीवों को गति–जाति आदि विविध भावों का अनुभव कराने वाला कर्म विशेष नाम कर्म है।

गोत्र कर्म – जो पुद्गल आत्मा की प्रतिष्ठा या अप्रतिष्ठा में निमित्त बनते हैं, वह हैं गोत्र कर्म। जैसे कुम्भकार मिट्टी से बने छोटे–बड़े घड़ों को विभिन्न नामों से पुकारता है, वैसे ही आत्मा विभिन्न उच्चावच शब्दों से पुकारी जाती है, वह गोत्र कर्म है।

अन्तराय कर्म – जैसे कोषाध्यक्ष राजा के द्वारा प्रदत्त राशि को देने में बाधा उपस्थित करता है, वैसे ही जो कर्म दान, लाभ, भोग, उपभोग और शक्ति – इनमें बाधक बनता है, वह अन्तराय कर्म है।

मोहनीय कर्म

मोहनीय कर्म केन्द्रीय कर्म है। आगम ग्रंथों में इसे सेनापति की संज्ञा दी गई है। जैसे सेनापति के मर जाने पर सेना भाग जाती है, वैसे ही मोह कर्म के नष्ट हो जाने पर शेष सारे कर्म टूट जाते हैं। मोहरूपी अरि के नष्ट हो जाने पर जन्म–मरण की परंपरा रूप संसार के उत्पादन की सामर्थ्य शेष कर्मो में नहीं रहने से उन कर्मो का सत्व असत्व के समान हो जाता है।

मैक्डूगल के अनुसार व्यक्ति में चौदह मूल प्रवृत्तियां और इतने ही संवेग होते हैं। मोहनीय कर्म की प्रकृतियों और इन मूल प्रवृत्तियों में अद्भुत समानता है।

जैन कर्म सिद्धांत के अनुसार मोहनीय कर्म की अट्ठाईस प्रकृतियां और इतने ही निपाक है। मूल प्रवृत्तियों और संवेगों के साथ इनकी तुलना की जा सकती है।

मोहनीय कर्म के निपाक	**मूल संवेग**
भय	भय
क्रोध	क्रोध

जुगुप्सा	जुगुप्सा
स्त्री वेद, पुरुष वेद, नपुंसक वेद,	कामुकता
मान	उत्कर्ष भावना
लोभ	अधिकार भावना
रति	उल्लसित भाव
अरति	दुःख

मनोविज्ञान के सिद्धांत के अनुसार संवेग के उद्दीपन से व्यक्ति के व्यवहार में परिवर्तन आ जाता है। कर्म–सिद्धांत के अनुसार मोहनीय कर्म के निपाक से व्यक्ति का चरित्र और व्यवहार बदलता रहता है।

मूल प्रवृत्तियां	**संवेग**
पलायन	भय
युयुत्सा	क्रोध
निवृत्ति	घृणा
पुत्र–कामना	वात्सल्य
शरणागति	करुणा
काम प्रवृत्ति	कामुकता
जिज्ञासा	आश्चर्य
दैन्य	आत्महीनता
आत्म–गौरव	आत्माभिमान
सामूहिकता	एकाकीपन
भोजनान्वेषण	भूख
संग्रह वृत्ति	अधिकार भावना
रचना वृत्ति	कृतिभाव
हास	आमोद

परिवर्तन के उपाय

दशवैकालिक सूत्र में भगवान महावीर का विश्व को सन्देश है –

उवसमेण हणे कोहं, माणंमद्दवया जिणे।
माया चज्जव भावेण, लोभं संतोस ओ जिणे।।

अर्थात्, क्षमा भाव से क्रोध को जीतना चाहिए, मार्दव (नम्रता) से मान–अभिमान को जीतना चाहिए, आर्जव (सरलता) से माया को जीतना चाहिए, और संतोष के भाव से लोभ पर विजय पानी चाहिए।

महर्षि पतंजलि ने भी **योगदर्शन** में कहा है– 'वितर्क बाधने प्रतिपक्ष

भावनम्', अर्थात् एक पक्ष को तोड़ना है तो प्रतिपक्षीय भावना उत्पन्न करो।

मनोवैज्ञानिकों का मत है कि मूल प्रवृत्तियों में अवदमन, विलयन, मार्गान्तरीकरण और शोधन की पद्धतियों से परिवर्तन लाकर व्यक्तित्व का विकास किया जा सकता है।

मूल प्रवृत्तियों का **अवदमन** (Repression) करना घाटी के स्वाभाविक जल–प्रवाह पर बांध बांधने के समान है। कड़े नियंत्रण से व्यक्ति के व्यवहार में सत्यता का अभाव आ जाता है।

विलयन (Inhibition) के दो अंग हैं – निरोध और विरोध। निरोध का अर्थ है कि प्रवृत्ति को उत्तेजित होने का अवसर ही न देना, जैसे कि स्त्री–पुरुष का साथ–साथ घूमना और बात–चीत करना हानिकर समझा जाता है। विरोध अर्थात दो पारस्परिक विरोधी प्रवृत्तियों को एक साथ ही उत्तेजित कर देने से भी मूल प्रवृत्तियों में परिवर्तन लाया जा सकता है। संग्रह–वृत्ति को त्याग–भावना से शांत किया जा सकता है। स्नेह, सहानुभूति और खेल की प्रवृत्ति उत्पन्न कर युयुत्सा (झगड़ा करना) की प्रवृत्ति में परिवर्तन किया जा सकता है।

मार्गान्तरीकरण (Redirection) की पद्धति से केवल प्रकाशन (expression) की प्रकिया में परिवर्तन लाया जाता है, जैसे कि ज्ञानार्जन से आत्म–विकास की ओर प्रवृत्त किया जा सकता है।

शोधन–उदात्तीकरण (Sublimation) से मूल प्रवृत्तियों के स्वरूप और प्रकाशन पद्धति दोनों में ही परिवर्तन आ जाता है। जैसे काम–प्रवृत्ति के शोधन से तुलसीदास जी भगवान में मन लगाकर **रामचरितमानस** के अमर गायक बन गए।

अध्यात्म के आचार्यो, दर्शन शास्त्र के विशेषज्ञों एवं मनोवैज्ञानिक सिद्धांतों के आधार पर निष्कर्ष की भाषा में कहा जा सकता है कि सतत् अभ्यास एवं वैराग्य भाव से व्यक्ति के आचार, चरित्र एवं व्यवहार में परिवर्तन लाया जा सकता है।

308/10, गली आर्य समाज, हांसी–125033 (हरियाणा)

("जैन कर्म सिद्धांत और मनोविज्ञान" लेखक का शोध ग्रन्थ है। वह हरियाणा की शिक्षा सेवा से प्राचार्य के पद से सेवा–निवृत्त हैं। – संपादक)

✧✧✧

महादुखरूप इच्छाओं का स्वरूप और भेद–प्रभेद

– डॉ. राजेन्द्र कुमार बंसल

संसार के दुख का मूल कारण इच्छा है। एक इच्छा पूर्ण नहीं हो पाती, उसके पहले दूसरी इच्छा उत्पन्न हो जाती है। इच्छा अपूर्ण रहने पर आकुलता होती है। पाश्चात्य अर्थशास्त्री एडम स्मिथ ने इच्छाओं की तृप्ति हेतु अर्थशास्त्र को जन्म दिया। अर्थ से महत्तम सुख की प्राप्ति हेतु उपभोग, उत्पादन, विनिमय, वितरण तथा राजस्व के सिद्धान्तों का निरूपण किया गया। वस्तुओं के उपभोग से इच्छाओं की तृप्ति/पूर्ति हेतु महत्तम उपयोगिता के सिद्धान्त का प्रतिपादन हुआ। अधिकतम उपभोग हेतु अधिकतम उत्पादन के लिये प्रकृति का निर्ममतापूर्वक दोहन हुआ और उससे पर्यावरण की अनेक समस्याएं उत्पन्न हुईं और हो रही हैं। इन सब प्रयासों के होते हुये भी इच्छाओं की तृप्ति नहीं हुई। इच्छाओं का गड्ढा गहरा होता ही गया। अर्थशास्त्र अनर्थशास्त्र बन गया। अति सम्पन्नता और सुख साधन सम्पन्न देशों में विक्षिप्त और अर्द्ध–विक्षिप्त जन समूह के प्रतिशत में वृद्धि चौकाने वाली है। उससे अनेक प्रश्न उत्पन्न हुए और उनमें अहं प्रश्न था कि सच्चा सुख या आध्यात्मिक सुख कैसे प्राप्त हो। भौतिक साधनों का महत्व और मूल्य है, किन्तु उनकी सीमा है। भौतिक साधन सीमित रूप से साधन ही है, साध्य नहीं। पश्चिमी जगत ने और अब अंधानुकरण में पूर्वी जगत ने, भौतिक सुख–सुविधाओं से इच्छाओं की तृप्ति को ही अपना ध्येय बना लिया और सच्चे सुख के मार्ग से भटक गये और भटक रहे हैं। अध्यात्म के उपदेशक प्रच्छन्न भौतिकवादी हो गये।

इच्छाओं का स्वरूप

अहं प्रश्न है कि अनाकुल सुख कैसे प्राप्त हो? उसका मार्ग क्या है? इसे जानने के पहले हमें हमारी इच्छाओं के स्वरूप को समझना होगा। उनका स्वरूप समझे बिना, उनसे निवृत्ति का मार्ग नहीं अपनाया जा सकता है। पूर्व जगत के धर्मदर्शन–जैनदर्शन में इच्छाओं को परिग्रह माना है और इच्छाओं के निरोध के ऊपर बहुत जोर दिया है और उसे ही निराकुल सुख का साधन माना है।

विश्व में अक्षय अनंत जीव हैं। उनमें अनादि से चार संज्ञाएं, यथा आहार संज्ञा, भय संज्ञा, मैथुन संज्ञा और परिग्रह संज्ञा विद्यमान हैं। संज्ञा शब्द कई अर्थो में प्रयुक्त होता है, यथा नाम ज्ञान और अभिलाषा आदि। यहां संज्ञा शब्द से अभिलाषा/तृष्णा अभिप्रेत है। आगम में वांच्छा, संज्ञा, अभिलाषा, इच्छा सभी एकार्थवाची हैं।

विशिष्ट भोजनादि–अन्नादि की वांच्छा होना आहार संज्ञा है जो असातावेदनीय कर्म की उदीरणा से होती है।

अत्यंत भय से उत्पन्न जो भागकर छिप जाने आदि की इच्छा होती है, वह भय संज्ञा है। यह भय कर्म की उदीरणा से होती है।

मैथुनरूप क्रिया में जो वांच्छा होती है, वह मैथुन संज्ञा है। यह वेदकर्म की उदीरणा से होती है।

धन–धान्यादि के अर्जन करने रूप वांच्छा को परिग्रह संज्ञा कहते हैं। यह लोभकर्म की उदीरणा से उत्पन्न होती है।

इच्छा अंतःकरण की प्रवृत्ति है। बाह्य और अभ्यंतर परिग्रह की अभिलाषा को इच्छा कहते हैं। तीन लोक सम्बन्धी अभिलाषा का नाम इच्छा है। यह लोभ कषाय का नामान्तर है।

आगम में इच्छा को ही परिग्रह कहा है। अनिच्छुक अपरिग्रही होता है। कषायादिक एवं चार संज्ञारूप तृष्णा ही संसार के दारूण दुख का कारण है और इच्छा का निवारण/निरोध ही सुख का कारण है। मोह के उदय से जीव इच्छाओं की तृप्ति में सुख मानता है और निरंतर दुखी बना रहता है।

इच्छा अनेक प्रकार की बहुरूपणी होती है। आचार्यकल्प पं. टोडरमल जी ने **मोक्षमार्ग प्रकाशक** (3/70) में इच्छाओं को चार भागों मे वर्गीकृत किया है –

विषय कषाय की इच्छा – पंच इन्द्रियों के विषय ग्रहण करने की इच्छा में जीव वर्ण देखना, राग सुनना, गंध सूंघना आदि की इच्छा करता है। जब तक इन विषयों की इच्छा पूर्ण नहीं होती, वह महा व्याकुल होता है।

कषाय भावों की इच्छा – क्रोधादिकषाय के अनुसार जीव को कार्य करने की इच्छा होती है, जैसे कि किसी का बुरा करना, किसी का मजाक करना आदि। जब तक जीव की यह इच्छा पूर्ण नहीं होती, महाव्याकुल बना रहता है।

अनिष्ट संयोग दूर करने की इच्छा – पाप के उदय से शरीर में या बाह्य में अनिष्ट कारण मिलते हैं तो उनको दूर करने की इच्छा होती है, जैसे कि रोग, पीड़ा, क्षुधा आदि। इसको दूर करने हेतु जीव प्रयास करता है और जब तक वह दूर न हो तब तक महाव्याकुल रहता है।

पुण्योदय से उत्पन्न इच्छा– पुण्य के उदय से जो बाह्य निमित्त मिलते हैं उनके अनुसार प्रवर्तने की इच्छा होती है। पुण्य का उदय धर्मानुराग से होता है, परन्तु धर्मानुराग में जीव कम लगता है, जीव तो बहुत पाप क्रियाओं में ही प्रवर्तता है। इसलिये चौथी इच्छा किसी जीव के किसी काल में ही होती है।

इच्छा आकुलता का कारण है। एक इच्छा पूर्ण होने पर दूसरी इच्छा उत्पन्न हो जाती है। एक समय भी निराकुल नहीं रहता। सुखी–दुखी होना इच्छा के अनुसार होता है, यह वाह्य कारणों के अधीन नहीं है।

पं. दीपचन्द जी काशलीवाल ने **भावदीपिका** में (5/145) में चौबीस परिग्रह के भेद करते समय इच्छाओं को मोह इच्छा, कषाय इच्छा, भोग इच्छा और रोग इच्छा के रूप में वर्गीकृत किया।

इच्छाओं का कषाय आधारित वर्गीकरण

आत्मा का स्वरूप ज्ञाता–दृष्टापना है, उससे विमुख होकर पर–स्वरूप राग–द्वेष भाव को कषाय कहते हैं। कषाय से पर–द्रव्यों में इष्ट–अनिष्ट की कल्पना कर जो उनसे राग–द्वेष करता है वह महा दुखी होता है। यह इच्छा का सामान्य स्वरूप है। राग द्वेष युक्त इच्छा चार प्रकार की होती है – अनन्तानुबंधी रूप, अप्रत्याख्यानावरण रूप, प्रत्याख्यानावरण रूप और संज्वलन रूप।

अनंतानुबंधी इच्छा का क्षेत्र बहुत व्यापक है। उसमें राज्य विरुद्ध, लोक विरुद्ध और धर्म विरुद्ध इच्छाएं समाहित हैं जो व्यक्ति को दण्डनीय और लोक निंदा का निमित्त बनाती हैं। राज्य द्रोह, स्वामी द्रोह, मित्र द्रोह, परिवार द्रोह, विश्वासघात करना या पहले के उपकार को भूल कर कृतघ्नी होना इत्यादि अनंतानुबंधी के महापाप रूप कार्य हैं। विषय कषायों के प्रति मूर्छा भाव होता है। देव–गुरू–धर्मादिक के समीप चौरासी आसाधना दोष लगाना, या उनके अन्य ग्रह–व्यंतरादि या देवी आदि की पूजा करना, स्थापित करना, उनकी कहानी स्तवन जप–भक्ति आदि करना अनंतानुबंध धर्म विरुद्ध कार्य हैं। अनंतानुबंधी जीव के सम्यकत्व गुण को ढकती है। अनंतानुबंधी कषाय इच्छा अनंत संसार का कारण है। इसका वासना काल संख्यात, असंख्यात अनंत भव पर्यन्त चलता है।

अप्रत्याख्यानावरण रूप तीन कषायों में महापाप और अन्याय रूप प्रवृत्ति के स्थान पर निर्मल परिणाम वादक होता है। न्यायपूर्वक निश्चल भाव होते हैं। चारों कषायों के कार्य और विषय सेवन आदि न्यायपूर्वक होते हैं इनके प्रति मूर्छा भाव नहीं होता। राज्य–लोक–धर्म विरुद्ध अयोग्य कार्य नहीं होते। सप्त व्यसन नहीं होते। अप्रत्याख्यान कषाय भाव देश संयम गुण को ढकता है। इसका वासना काल छह माह पर्यन्त है। इसके बाद उपशांति हो जाती है।

प्रत्याख्यानावरण रूप में जीव सर्व संसारिक विषय कषाय कार्यो से उदास होता है। बहुत आरम्भ और बहुत परिग्रह का त्याग कर अल्प–आरम्भ

अल्प–परिग्रह प्रमाण सहित अंगीकार करता है। यह भी शीत उष्णादि रोग की निवृत्ति हेतु रखता है, विषय सेवन के लिये नहीं। प्रत्याख्यान कषाय के उदय में जीव सकल संयम ग्रहण नहीं कर पाता! एक देश संयम धारण करता है। प्रतिमाएं ग्रहण करता है। वासना काल पंद्रह दिन होता है।

संज्वलन रूप में मन्द, मन्दतर कषायों के सदभाव में जीव, सकल संयम अंगीकार करते हैं। प्रमत्त षष्ठम् गुण स्थान में किंचित प्रमाद उत्पन्न होता है। आहार विहारादि कार्य रूप प्रवर्तते हैं। संज्वलन कषाय भाव जीव के यथाख्यात चारित्र को ढकता है। वासना कार्य अंतरमुर्हुत होता है। कषाय का उदय अतिमन्द अबुद्धिपूर्वक होता है।

इस प्रकार चार प्रकार की कषाय की आसक्ति एवं प्रवृत्ति के अनुसार जीव की अनेक प्रकार की इच्छाएं होती हैं। ये इच्छाएं लेश्याओं का अनुगमन करती हैं। कषाय से अनुरंजित योगों की प्रवृत्ति का नाम लेश्या है। कषायों की प्रवृत्ति तीव्र, मध्य, मन्द और मन्दतर ऐसे चार प्रकार की होती है और उसके अनुसार आत्मा पांच पाप रूप कार्यो में प्रवर्तता है। उक्त प्रवृत्ति अनुसार कृष्ण, नील कापोत, पीत, पद्म और शुक्ल लेश्या होती है। जब क्रोधादि कषायों का उत्कृष्ट अनुभाग सहित उदय होता है तब आत्मा मन, वचन, काय द्वारा तीव्र पांच पाप करता है, तब उस भाव का नाम कृष्ण लेश्या कहलाता है। अनन्तानुबंधी कृष्ण लेश्या वाला जीव प्रचंड क्रोधी, लम्पट, पांच पाप की वांच्छावाला, अति विषयासक्त होता है। भय भीत और 25 विकथा में आरूढ़ होता है। पीत, पद्म शुक्ल लेश्या में अनन्तानुबंधी कषाय अति मन्द होती है, वहां तत्व रूप द्रव्य सम्यक्त्व होता है। बुद्धिपूर्वक मोक्ष हेतु द्रव्य अणुव्रत–द्रव्य महाव्रत के भाव होते हैं और उनका विधिपूर्वक निर्दोष पालन होता है तथापि अंतरंग में अबुद्धिपूर्वक कोई अंश अन्यथा प्रवर्तता है या अन्यथा प्रवृत्ति होने से मोक्ष मार्ग का अभाव होता है। इस प्रकार लेश्या भाव के अनुरूप इच्छा और प्रवृत्ति होती है।

पांच इन्द्रियों और मन की विषय–कषाय रूप स्वछन्द प्रवृत्ति असंयम भाव से होती है। असंयम में इच्छाएं निरंकुश होती हैं। हेय–उपादेय, ग्रहण–त्याग का भाव नहीं होता। छह काय के जीवों की दया नहीं पलती। ऐसा असंयम भाव अनन्तानुबंधी चारित्र मोह के उदय से प्रथम दो गुण स्थानों में होता है। दूसरा असंयम भाव अप्रत्याख्यानावरण चारित्र मोह के उदय से तीसरे चौथे गुण स्थान में होता है। विषय कषाय, हिंसा रूप प्रवृत्ति न्याय–अन्याय विचार सहित होती है। तदनुसार अयोग्य अन्याय रूप इच्छायें नहीं होती। वीतराग विशेष

ज्ञान होने के अर्थी कषायमय इच्छा छोड़कर अरहंतादिक को नमस्कारादि रूप मंगल करते हैं।

शुभ–अशुभ और शुद्ध भाव की इच्छा

जीव के तीन स्वभाव भाव, इकतालीस विभाव भाव और नौ शुद्ध भाव होते हैं और तदनुसार इच्छाएं होती हैं। कुल 53 भाव होते हैं। इकतालीस विभाव भाव कर्मो की सापेक्षता सहित हैं, जिनमें 22 शुभ भाव और 19 अशुभ भाव होते हैं। शुभ और अशुभ भावों के अनुरूप अच्छी बुरी इच्छाऐं और शुभ–अशुभ उपयोग होता है।

केवलज्ञान–दर्शन, क्षायिक सम्यक्त्व, क्षायिक चारित्र, और 5 लब्धियां – ये नव शुद्ध भाव हैं। इन भावों की भावना और शुद्धोपयोग की इच्छा साधक को होती है। साधक अशुभोपयोग से बचता है और बुद्धिपूर्वक शुभोपयोग में प्रवृत्ति करता है। इच्छाएं भी भावनानुसार रूपांतरित होती रहती हैं।

कर्मोदय जन्य कषाय भाव से उत्पन्न शुभ–अशुभ इच्छाएं ही दुख का कारण हैं, स्वयं दुख रूप हैं और आकुलता की जननी हैं। इच्छाओं की उत्पत्ति का मूल कारण मिथ्यादर्शन, मिथ्याज्ञान और मिथ्याचारित्र है। इनका अभाव करने से मोक्ष रूप अनाकुल सुख मिलता है। मोक्षमार्ग सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र की एकता है और वीतरागी देव–गुरू–शास्त्र की शरण है।

भौतिक अर्थ शास्त्र में इच्छाओं की पूर्ति के साथ इच्छाओं के नियमन और संयमन द्वारा अधिकतम उपयोगिता प्राप्त की जाती है और साधन के अनुरूप इच्छाएं सीमित की जाती हैं। अध्यात्म के क्षेत्र में इच्छा ही परिग्रह है – मूर्छा है, इच्छाओं का निरोध/संयमन/नियमन तप और संयम है। अतः साधक आत्म साधना के उत्तरोत्तर विकास क्रम में 'इच्छाओं से सुख नहीं मिलता,' इस धारणा के साथ इच्छाओं को कम करता हुआ उनका अभाव करता है। व्रताचार सहकारी होते हैं। अतः जिन्हें लौकिक और अलौकिक सुख पाने का भाव है उन्हें इच्छा निरोध को अपनाना चाहिए।

बी–369, ओ.पी.एम. कॉलोनी, अमलाई, (जि.शहडोल)–484117

(डॉ. बंसल जैन दर्शन के प्रकाण्ड विद्वान हैं। गूढ़ विषय को प्रतिपादित कर, इस लेख में उन्होंने स्पष्ट किया है कि तप–संयम का मूल भाव और आधार इच्छाओं का निरोध है। – सम्पादक)

✦✦✦

भक्ष्य / अभक्ष्य : चिन्तन अपेक्षित

– श्री अजित जैन 'जलज'

श्री शुभचन्द्राचार्य **ज्ञानार्णव** में लिखते हैं –

यत्र बालश्चरत्यस्मिन्यथि तत्रैव पंडितः।
बालः स्वमपि बध्नाति मुच्यते तत्वविद्ध्रुवम्।।

अर्थात् जिस मार्ग पर अज्ञानी चलता है, उसी पर ज्ञानी। दोनों का धर्माचरण समान होने पर अज्ञानी अविवेक के कारण कर्म बांधता है और ज्ञानी विवेक द्वारा कर्म बन्धन से छूट जाता है।

शुद्ध भक्ष्य एवं त्याज्य अभक्ष्य पर चर्चा तर्क, तथ्य, विश्लेषण एवं स्वानुभूति की अपेक्षा रखती है जो विज्ञान एवं जैन धर्म दोनों के आधार स्तम्भ हैं और इसीलिए जैन धर्म को सर्वाधिक वैज्ञानिक धर्म माना जाता है। सत्य के अनुसंधान में परीक्षण की प्रक्रिया अत्यावश्यक है।

जैनागम में स्पष्ट रूप से समस्त जीवों की हिंसा से बचने के लिये एकेन्द्रिय स्थावर वनस्पति को भोजन के रूप में स्वीकार किया गया है। अर्थात् दो इन्द्रिय से लेकर पंचेन्द्रिय के जीवों को अभय दान देना हमारा प्रमुख ध्येय रहा है परन्तु अपने अधिकांश साधर्मीजन अविवेकपूर्वक आपस में ही उलझते रहते हैं। सबका अपना–अपना विवेक एवं सम्यक्त्व है परन्तु सत्य का शोधक अपना अभीष्ट पा ही लेता है।

उलझता आहार

जैन धर्म का भक्ति भाव से पालन करने वाले श्रावकों से यदि भक्ष्य एवं अभक्ष्य वनस्पतियों की सूची तैयार करायी जाये तो लाखों श्रावकों में हजारों प्रकार की सूचियां तैयार हो जायेंगी। सब के अपने–अपने तर्क, आस्थायें, परम्परायें, आधार अथवा रुचियां हैं।

विभिन्न श्रावकाचारों के अध्ययन से भी यह गुत्थी सुलझने की बजाय उलझती अधिक है। इस उलझन से निकलने के लिये विद्वानों के प्रयत्न कहीं दृष्टिगोचर नहीं होते हैं परन्तु इससे भी दुःखद तथ्य यह है कि अपने–अपने आग्रहों को लिये हुये श्रावक अपने साधर्मी श्रावकों के आहार पर निन्दा, कटुता अथवा उपेक्षा का भाव प्रकट करता है।

विरोधाभासी विचारधारा

वनस्पतियों के वर्गीकरण पर कषाय कर रहे धर्म के धुरंधर त्रस जीवों पर क्या क्या करते हैं –

1 अपने ही बच्चों को अपने हाथों भ्रूण में मरवा देते हैं। ऐसा करने वाले एवं करवाने वाले समाज में सम्मानीय बने रहते हैं। इस भयंकर कत्लखाने के कारणों की चर्चा भी समाज में प्रतिबन्धित है।

2 दूध के कारण कितनी हिंसा हो रही है? हमारे चारों ओर हमारे ही प्रमाद से दिन रात ऐसे पशु कत्ल किये जा रहे हैं जिनके उपकारी दूध के अंश हमारी देह में विद्यमान हैं। दुनिया में हजारों शाकाहारी लोग तो इसी कारण दूध को मांसाहार मानते हुये इसका त्याग कर चुके हैं। परन्तु हम निर्दोष दूध की प्राप्ति में सक्षम नहीं हो सके हैं।

3 मनोरंजन, खेती, प्रसाधनों, दवाइयों आदि अनेक माध्यमों से प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से हम दो इन्द्रिय से लेकर पंचेन्द्रिय जीवों के घात के कारण बन रहे हैं। यहां तक कि हमारे जिनालय भी मूक त्रस जीवों की पीड़ा से कराहते दिखते हैं। परन्तु अब अहिंसा की नहीं, अर्थ की चर्चा होती है। प्राणरक्षा की नहीं, प्राण प्रतिष्ठा की दुहाई दी जाती है।

उपरोक्त हिंसा से बचने के लिये पूरे विश्व में अनेक व्यक्ति एवं संस्थायें प्रशंसनीय कार्य कर रहे हैं। शाकाहार एवं जीवदया के प्रचार–प्रसार में पूजन–पाठ करने वाले जैनों की रुचि बहुत क्षीण है।

शिप ऑफ थीसियस एवं कल्याण कारक

आनन्द गांधी की फिल्म **शिप ऑफ थीसियस** ने वर्ष 2013 का 61वां राष्ट्रीय फिल्म पुरस्कार प्राप्त किया है। इसके अलावा इस फिल्म ने अनेक राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय पुरस्कार भी प्राप्त किये हैं।

आपको यह जानकर प्रसन्नता होगी कि यह फिल्म मूलतः महावीर के मार्ग की ही प्रभावना करती है। एक जैन साधु प्रसाधनों में होने वाली पशु हिंसा से व्यथित होता है। एलोपैथी में होने वाली प्रचण्ड क्रूरता को समझता है और अन्ततः असाध्य बीमारी से ग्रसित हो जाने पर अंग्रेजी दवाइयों से इन्कार कर मृत्यु के मार्ग की ओर बढ़ता है।

यह बहुत बड़ी विडम्बना ही है कि वनस्पति स्थावर को वर्गीकृत कर आहार से उलझने वाले अनेक लोग ही क्रूरता–युक्त अंग्रेजी दवाइयों का नियमित सेवन कर/करा रहे हैं। जैनागम में चिकित्सा का एकमात्र

अवशेष ग्रन्थ **कल्याण कारक** है जिसमें मांसाहारी चिकित्सा पद्धतियों से लड़ने का आधार दिया गया है। शुद्ध अहिंसक इस चिकित्सा ग्रन्थ की भी सब ने भरपूर उपेक्षा की है।

दूध से लेकर दवा तक श्रमण एवं श्रावकों को शुद्ध सात्विक भक्ष्य पदार्थों की उपलब्धता पर कहीं कोई कार्य नहीं किया जा रहा है। यदि शक्तिशाली समृद्ध समाज इस दिशा में कार्य करना प्रारंभ कर दे तो ना केवल चतुर्विध संघ को शुद्ध आहार प्राप्त हो सकेगा वरन् यह समस्त विश्व को जैन धर्म का अनुपम आधुनिक उपहार होगा।

आचार्य जुगल किशोर मुख्तार 'युगवीर' के विचार

सौ साल पहले 'युगवीर' ने लिखा था कि –"आजकल जैनियों में दया का अभाव है। शायद हमारे बहुत से भोले जैनी केवल हरी और कन्दमूल का त्याग करने से ही अपने को दयावान समझते हों। परन्तु याद रहे उनका यह लोक प्रचार से प्रेरित हुआ **अकम त्याग** केवल बाह्य आडंबर और लोक दिखावा के सिवाय और कुछ भी अर्थ नहीं रखता।

भला जिन लोगों को पंचेन्द्रिय प्राणियों पर दया नहीं आती, पापियों का पाप, अज्ञानियों का अज्ञान और मिथ्यात्वियों का मिथ्यात्व छुड़ाने में जिनकी प्रवृत्ति नहीं होती, जो सप्त व्यसन और पंच पापों का त्याग नहीं करते, जो अपने भाइयों को सताने और दुख देने में आगा–पीछा नहीं सोचते और जिनके हृदय छल–कपट, ईर्ष्या–द्वेष, अन्याय–द्रोह और वैर–विरोध से परिपूर्ण हैं उनके दिलों में, दृष्टि में भी न आने वाले एकेन्द्रिय जीवों की रक्षा का भाव होना कब कोई अनुमान कर सकता है? कदापि नहीं।

इसलिये जिन भाइयों को ऐसा खयाल हो भी उनको अपना ख्याल बदल देना चाहिए और लोक प्रवाह में न बह कर बाह्य आडंबर और बनावट को छोड़कर अन्तः शुद्धि की ओर विशेष ध्यान देना चाहिए और अपने दोषों का संशोधनपूर्वक सच्ची दया को हृदय में स्थान देकर जैन धर्म की महिमा प्रकट करनी चाहिए।"

अंतिम आग्रह

1 शुद्ध सात्विक आहार की सहज प्राप्ति हेतु हमें मूल जैनागम एवं आधुनिक विज्ञान के समन्वय से अपना असली मार्ग खोजना होगा।

2 शुद्ध शाकाहार के प्रचार–प्रसार में मिलजुल कर सक्रियता से सभी सम्मिलित हों।

3 कीड़े–मकोड़ों, पशु–पक्षियों की सुरक्षा में संलग्न विश्वव्यापी संस्थाओं से समन्वय स्थापित किया जाये।

4 अपने साधर्मी बन्धुओं को वर्गीकृत वनस्पतियों के सेवन पर घृणा का पात्र नहीं बनायें। भक्ष्य एवं अभक्ष्य की अपनी मान्यताओं का अपने अनुसार पालन अवश्य करें परन्तु दूसरों के प्रति कषाय पाल कर एवं फैलाकर धर्म की विराधना नहीं करें।

5 विद्वानों द्वारा भक्ष्य–अभक्ष्य पर आगम सम्मत प्रमाण प्रस्तुत किये जायें तथा वात्सल्य युक्त वातावरण में वार्ता की जाये।

साधर्मी जन के प्रति द्वेष एवं हिंसा का भाव मिथ्यात्व का सूचक है। सम्यग्दर्शन का प्रथम लक्षण प्रशम है। **पंचाध्यायी** के श्लोक 427 में कहा गया है कि अपराध करने वाले जीवों के विषय में कभी भी उनको मारने आदि की प्रयोजक बुद्धि का न होना प्रशम भाव है।

मधु ज्वैलरी, राजमहल रोड, टीकमगढ़–472001

(श्री 'जलज' करुणा इण्टरनेशनल के मध्य प्रदेश के प्रान्तीय समन्वयक हैं। व्यवसाय से अध्यापक हैं। – सम्पादक)

✧✧✧

तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उ0प्र0
प्रतिवेदन वर्ष 2013–14

तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उत्तर प्रदेश, का गठन सन् 1976 ई0 में 24वें तीर्थंकर भगवान वर्धमान महावीर स्वामी का 2500वां निर्वाण महोत्सव वर्ष मनाने के लिए राज्य सरकार द्वारा गठित **श्री महावीर निर्वाण समिति, उ0प्र0,** की उत्तराधिकारी संस्था के रूप में जैन धर्म की सभी आम्नायों के महानुभावों के सहयोग से किया गया था तथा गठन के तुरन्त बाद ही उसे सोसायटी रजिस्ट्रीकरण अधिनियम के अन्तर्गत रजिस्टर्ड करा लिया गया था जिसका नियमानुसार नवीनीकरण यथासमय कराया जाता है।

समिति का वर्ष 2012–13 का प्रतिवेदन **शोधादर्श–77** (जून, 2013) के पृष्ठ 62–67 पर प्रकाशित है। यहां वर्ष 2013–14 (1 अप्रैल, 2013 से 31 मार्च, 2014) का प्रतिवेदन प्रस्तुत है।

आलोच्य वर्ष में समिति की प्रवृत्तियों की प्रगति निम्नवत रही :–

1 तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र शोध पुस्तकालय

पुस्तकालय की स्थापना वर्ष 1976 की श्रुत पंचमी को की गई थी और इसका विधिवत उद्घाटन 23 अक्टूबर, 1976, को प्रदेश के तत्कालीन ग्राम्य विकास मंत्री माननीय डॉ. रामजीलाल सहायक के कर कमलों से सम्पन्न हुआ था। पुस्तकालय और उससे संलग्न वाचनालय श्री मुन्नेलाल कागजी जैन धर्मशाला ट्रस्ट, चारबाग, लखनऊ द्वारा धर्मशाला के प्रथम तल पर उपलब्ध कराये गये एक कक्ष में प्रारंभ किया गया था, जो मई 2001 से धर्मशाला के द्वारा भूतल पर किराये पर उपलब्ध कराये गये दो कक्षों में चल रहा है।

समिति के सदस्यों के अतिरिक्त पुस्तकालय के सदस्य भी हैं जिनकी संख्या इस वर्ष 45 रही। लखनऊ में चारबाग ही नहीं वरन् आसपास की कॉलोनियों के जैन परिवार तथा अनेक जैनेतर जिज्ञासु महानुभाव भी पुस्तकालय के सदस्य हैं। कुछ सदस्य लखनऊ के बाहर के भी हैं।

पुस्तकालय में जैन धर्म, दर्शन, संस्कृति आदि के अध्ययन हेतु जैन धर्म की सभी आम्नायों का साहित्य तथा शोधार्थियों द्वारा तुलनात्मक अध्ययन के लिए अन्य भारतीय धर्मो, दर्शनों एवं संस्कृति से सम्बन्धित महत्वपूर्ण साहित्य संग्रहीत है। अपने विशिष्ट संकलन के लिये इन विषयों के शोधार्थी पाठकों में यह पुस्तकालय विशेष लोकप्रिय है तथा लखनऊ,

कानपुर व अन्य विश्वविद्यालयों से सम्बद्ध शोध छात्र इससे लाभ उठाते हैं। सामान्य रुचि के पाठकों के लिए लौकिक एवं सामान्य ज्ञानवर्धक साहित्य भी पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध है।

वर्ष 2013–14 में पुस्तकालय में 396 पुस्तकों की वृद्धि हुई। राजा राममोहनराय पुस्तकालय प्रतिष्ठान कोलकाता से प्रदेश सरकार के शिक्षा विभाग (पुस्तकालय कोष्ठक) के माध्यम से पुस्तक अनुदान के रूप में 364 पुस्तकें प्राप्त हुई। शेष 32 पुस्तकें भेंट स्वरूप प्राप्त हुई।

शोध पुस्तकालय के वाचनालय में प्रायः 100 धार्मिक, सामाजिक सामयिक एवं शोध पत्र–पत्रिकाएं (साप्ताहिक, पाक्षिक, मासिक, त्रैमासिक चातुर्मासिक, षट्मासिक और वार्षिक)समिति की शोध–पत्रिका **शोधादर्श** के परिवर्तन में प्राप्त होती हैं।

पुस्तकालय–वाचनालय से प्रतिदिन प्रायः 50 पाठक लाभ उठाते हैं। पुस्तकालय–वाचनालय का समय प्रातः 9.30 से अपराह्न 2.00 बजे तक है। शनिवार और सार्वजनिक अवकाश पर पुस्तकालय–वाचनालय बन्द रहता है।

पुस्तकालय–वाचनालय का कार्य पूर्ववत पुस्तकालय व्यवस्थापिका श्रीमती हेमा सक्सेना, एम0ए0, द्वारा सुचारु रूप से देखा जाता रहा।

2 शोधादर्श

जैन विद्या की शोध को समर्पित शोध–पत्रिका **'शोधादर्श'** का प्रकाशन फरवरी 1986 में समिति द्वारा प्रथम अंक के प्रकाशन से प्रारंभ किया गया था। इसके आद्य–सम्पादक इतिहास–मनीषी विद्यावारिधि डॉ. ज्योति प्रसाद जैन थे। जून 1988 में उनके स्वर्गवास के उपरान्त अंक 7 से प्रधान सम्पादक के दायित्व का निर्वहन डॉ. शशि कान्त ने किया। अंक 30 (नवम्बर 1996) से अंक 56 तक प्रधान सम्पादक के कार्यभार का सम्पादन श्री अजित प्रसाद जैन ने किया। उनके निधन के उपरान्त अंक 57 (नवम्बर 2005) से अंक 67 (मार्च 2009) तक श्री रमा कान्त जैन ने इसके सम्पादन के दायित्व का निर्वहन किया।

अंक 68 (नवम्बर 2009) से **शोधादर्श** के सम्पादन का दायित्व मेरे द्वारा निर्वहन किया जा रहा है।

जून 2013 और दिसम्बर 2013 में **शोधादर्श** के **कमशः** अंक 77 और 78 प्रकाशित हुए। इनमें 200 पृष्ठों की ज्ञानप्रद व उपयोगी संग्रहणीय

सामग्री प्रकाशित है। अंक 77 में श्रुत पंचमी एवं शोध पुस्तकालय के स्थापना दिवस पर आयोजित कार्यक्रम का विवरण है। अंक 78 वीर शासन जयंती को समर्पित है और इसमें शाकाहार पर विशेष लेख प्रकाशित हैं। उपरोक्त विशिष्ट सामग्री के अतिरिक्त पत्रिका के सामान्य स्तम्भ भी सम्मिलित रहे। पत्रिका की लोकप्रियता में उत्तरोत्तर वृद्धि हुई है तथा आज यह पत्रिका देश की उच्च स्तरीय धार्मिक–सांस्कृतिक शोध–पत्रिकाओं में अपना विशिष्ट स्थान रखती है।

3 तीर्थंकर छात्र सहायता कोष

इस वर्ष आर्थिक दृष्टि से निर्बल 27 विद्यार्थियों को अध्ययन जारी रखने हेतु आंशिक सहायता प्रदान करने पर रु. 28,362/– का व्यय किया गया। उपाध्यक्ष श्री महेन्द्र प्रसाद जैन ने इस कार्य के सम्पादन में बहुमूल्य योगदान किया।

4 महावीर जन कल्याण निधि

इस वर्ष पांच असहाय महिलाओं को सहायता प्रदान करने पर रु. 2,600/– का व्यय किया गया।

5 दैवी आपदा राहत कोष में अभिदान

उत्तराखंड में भीषण बाढ़ के कारण उत्पन्न आपात स्थिति से त्रस्त लोगों की सहायता के लिए उत्तराखंड राहत कोष में रु. 11000/– की सहायता प्रदान की गई।

6 श्रुत पंचमी और शोध पुस्तकालय स्थापना दिवस

11 जून, 2013 को तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति के शोध पुस्तकालय के संस्थापक श्रद्धेय इतिहास–मनीषी डॉ. ज्योति प्रसाद जैन की 25वीं पुण्यतिथि पर जयशंकर प्रसाद सभागार में 'ज्योति प्रसाद जैन ट्रस्ट' के सहयोग से विशेष आयोजन किया गया। डॉ.साहब की प्रेरणा से और शोध पुस्तकालय का उपयोग करके जिन 14 शोधार्थियों ने शोध कार्य पूरा कर पी–एच.डी./डी.लिट. की उपाधि प्राप्त की, उन्हें स्मृति–चिन्ह प्रदान कर सम्मानित किया गया। समारोह के अध्यक्ष वरेण्य विद्वान डॉ. अशोक कुमार कालिया और विशिष्ट अतिथि साहित्य–मनीषी श्री विनोद चन्द्र पाण्डेय 'विनोद' का भी अभिनन्दन किया गया।

7 लेखे की स्थिति

समिति के लेखे का आडिट इस वर्ष भी श्री आलोक जिन्दल, चार्टर्ड एकाउन्टेन्ट, द्वारा किया गया और उनके माध्यम से आयकर कार्यालय को आवश्यक विवरणी यथासमय प्रस्तुत की जायगी।

शासन से प्राप्त पुस्तक अनुदान तथा कतिपय दातारों से भेंट स्वरूप प्राप्त साहित्य के अतिरिक्त कुल प्राप्तियां वर्ष में रु0 2,40,972.80 रहीं (इसमें रु0 600/– पुस्तकालय सिक्योरिटी राशि भी है जो रिफन्डेबिल है) तथा व्यय रु. 1,38,033.00 हुआ। फिक्स डिपॉज़िट निवेशों की मैच्योरिटी के कारण प्राप्ति की बढ़ी राशि को पुनः फिक्स डिपॉज़िट में निवेशित कर दिया गया। प्राप्ति–व्यय की विवरण तालिका संलग्न है। इसमें पुस्तकालय–वाचनालय का मासिक किराया सम्मिलित नहीं है क्योंकि उसका समायोजन श्री मुन्ने लाल कागजी जैन धर्मशाला ट्रस्ट को दी गई अग्रिम धनराशि से होता है।

मुन्नेलाल कागजी जैन धर्मशाला ट्रस्ट को दी गई अग्रिम किराये की अवशेष राशि रु. 1,66,400/– में से वर्ष 2013–14 में रु. 1600/– की दर से रु. 19,200/– की धनराशि मासिक किराये के रूप में समायोजित की गई, और अग्रिम किराये की राशि रु. 1,47,200/– अवशेष रही।

8 अन्य प्रवृत्तियां

वित्तीय वर्ष 2012–13 (असेसमेन्ट वर्ष 2013–14) का इन्कम टैक्स रिटर्न यथासमय जमा कर दिया गया और आयकर विभाग द्वारा अपेक्षित अन्य सूचना उपलब्ध कराके प्रकरण का यथोचित निस्तारण करा दिया गया। रजिस्ट्रार, सोसायटीज, उ0प्र0, लखनऊ, को यथावश्यक सूचना प्रेषित की जाती रहीं।

9 अन्तिम

विगत वर्ष 2013–14 की सभी प्रवृत्तियों के सम्पादन में मुझे समिति के अध्यक्ष श्री लूणकरण नाहर जैन का तथा प्रबन्ध समिति के सभी माननीय सदस्यों का सक्रिय सहयोग एवं मार्गदर्शन निरंतर उपलब्ध रहा। **शोधादर्श** का सम्पादन डॉ. शशि कान्त के मार्गदर्शन में और सह–सम्पादक श्री सन्दीप कान्त जैन, श्री अंशु जैन 'अमर' व सौ. डॉ. अलका अग्रवाल के सहयोग से व्यवस्थित किया जाता रहा।

सभी क्रियाकलापों में समिति के माननीय सदस्यों का सौहार्दपूर्ण सहयोग प्राप्त रहा। इन सभी महानुभावों के प्रति आभार व्यक्त करना मेरा व्यक्तिगत और नैतिक दायित्व है।

नलिन कान्त जैन

25–6–2014 महामंत्री

TIRTHANKAR MAHAVIR SMRITI KENDRA SAMITI, U.P.

Statement of Receipts & Payments for the Year ending 31st March, 2014

RECEIPTS		Rs. P.	PAYMENTS		Rs. P.
Balance b/d:			Research Library:		
F.D.R.s.	21,70,363.00		Salary Libr. Asstt.	43,000.00	
Savings Bank	73,699.65		Salary Cleaner	2,800.00	
Cash in Hand	690.00	22,44,752.65	Contingencies	1,464.00	47,264.00
Membership Fee		5,100.00			
Research Library			Shodhadarsh Magazine:		
Security Deposit	600.00		Stationery & Prtg.	35,890.00	
Subscription	1,640.00		Dispatch Postage	4,065.00	39,955.00
Misc. Receipts	12.00	2,252.00			
Shodhadarsh Magazine			Stationery		506.00
Subscription	2,740.00		Postage		596.00
Donation	4,101.00	6,841.00	M.J.K. Nidhi Expenses		2,600.00
			T.C.S. Kosh Scholarship Exp.		28,362.00
			I.T. Counsel's & Audit Fee		7,750.00
Interest on F.D.Rs.		2,22,320.80	Uttarakhand Relief Fund		11,000.00
Interest on Savings Bank		4,459.00	Balance c/f:		
			F.D.Rs.	22,15,000.00	
			Savings Bank	1,31,892.45	
			Cash in Hand	800.00	23,47,692.45
		24,85,725.45			24,85,725.45

Compiled on the basis of information and explanations furnished.

For Avanish K. Rastogi & Associates
Chartered Accountants
Alok Jindal
Partner

रिपोर्ट

श्री राजीव कान्त जैन की काव्य कृति *सोनचिरैया फिर चहकेगी* का लोकार्पण

इतिहास–मनीषी डॉ. ज्योति प्रसाद जैन की 26वीं पुण्य तिथि पर 11 जून 2014 को लखनऊ में उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान के प्रेमचंद सभागार में एक विशिष्ट कार्यक्रम का आयोजन किया गया। इस कार्यक्रम में डॉ. साहब के सुपौत्र श्री राजीव कान्त जैन की काव्य कृति **सोनचिरैया फिर चहकेगी** का लोकार्पण विख्यात साहित्यकार कवि–शिरोमणि श्री सूर्य कुमार पाण्डेय के कर कमलों द्वारा, मूर्धन्य साहित्यकार श्री रवीन्द्र कुमार 'राजेश' और हिन्दी साहित्य मर्मज्ञ डॉ. सरल अवस्थी के सान्निध्य में सम्पन्न हुआ। लखनऊ के साहित्यकार, पत्रकार और प्रबुद्ध नागरिकों की बहुल उपस्थिति ने कृतिकार और उनकी कृति के महत्व को रेखांकित किया।

रचनाक़ार श्री राजीव कान्त जैन भारतीय रेल सेवा में मुख्य अभियंता, सिग्नल एवं टेलीकाम, के पद पर कार्यरत हैं। प्रोफेशन से इंजीनियर होते हुए उनमें काव्य प्रतिभा नैसर्गिक है। **सोनचिरैया फिर चहकेगी** उनका दूसरा काव्य संकलन है। इसके पहले उनके काव्य संकलन **हम हिंदी, बोलें हिन्दी** का लोकार्पण राजकोट में संसदीय राजभाषा समिति के सदस्य श्री बालकवि बैरागी द्वारा 3 अक्टूबर 2001 को किया गया था। प्रस्तुत कृति **सोनचिरैया फिर चहकेगी** में उनकी 55 कविताओं को 5 वर्गो में संकलित किया गया है, यथा – 'देश की लगन', 'प्रेम की अगन', 'परिवेश की चुभन', 'मन की उलझन' और 'कुछ यूं ही भटकन'। इसका प्रकाशन रोटरी क्लब, कोटा राउण्ड टाउन, द्वारा किया गया है।

मंगलाचरण के रूप में **वीतराग स्वरूपं** के सस्वर गायन और श्रद्धेय डॉ. साहब के चित्र पर माल्यार्पण के उपरांत 'ज्योति प्रसाद जैन ट्रस्ट' के अध्यक्ष और इस कार्यक्रम के संयोजक **श्री नलिन कान्त जैन** ने अपने स्वागत सम्बोधन में अपने पितामह डॉ. ज्योति प्रसाद जैन जी के प्रति अपने श्रद्धा सुमन अर्पित किये, अपने अनुज श्री राजीव कान्त जैन का

व कार्यक्रम के अध्यक्ष श्री सूर्य कुमार पाण्डेय, मुख्य अतिथि श्री रवीन्द्र कुमार 'राजेश' और विशिष्ट अतिथि डॉ. सरल अवस्थी का परिचय दिया, तथा सभी समागत महानुभावों का कार्यक्रम को गरिमा प्रदान करने के लिए स्वागत किया।

अपने आशीर्वचन में **डॉ. शशि कान्त** ने कहा कि यह मेरे लिए विशेष आह्लाद का अवसर है कि आज पिता जी श्रद्धेय इतिहास–मनीषी डॉ. ज्योति प्रसाद जैन की पुण्य तिथि पर उनके पौत्र श्री राजीव कान्त जैन की काव्य कृति **सोनचिरैया फिर चहकेगी** का लोकार्पण सम्पन्न हो रहा है। राजीव की काव्य प्रतिभा बाल्यकाल से ही प्रस्फुटित रही। अपने छात्र जीवन में और तत्पश्चात् प्रशासकीय दायित्वों का निर्वहन करते हुए उन्होंने अपनी सृजनशीलता को गतिमान रखा। अपनी काव्य प्रतिभा का उपयोग उन्होंने रेलवे की सेवा में भी किया। 2001 में राजकोट मण्डल के रेलवे स्टेशनों पर यात्रियों से स्वच्छता प्रयास में सहयोग देने की अपील **"स्वच्छ हो रेल सफर"** कविता के माध्यम से की थी और स्टेशनों पर उसके कैसेट बजाये गये थे तथा परचे बांटे गये थे। 2000 में राजकोट मण्डल में सूखा राहत के लिए रेल गाड़ियों द्वारा पशु–चारा एवं पेयजल लाने के कार्य के लिए प्रेरणा पंक्तियां भी प्रस्तुत की थीं। 6 नवम्बर 2001 को पश्चिम रेलवे के सतर्कता चेतना अभियान के उपलक्ष में आयोजित **घोष वाक्य** प्रतियोगिता में उनका **घोष वाक्य** –

रिश्वत की कमाई कब किसे रास आयी।
मेहनत की कमाई जीवन में खुशियां लायी।।

पुरस्कृत हुआ था। चि. राजीव को मेरा अविरल आशीर्वाद है कि प्रशासकीय सेवा की व्यस्तताओं में अपना सम्पूर्ण उपयोग लगाते हुए वह रचनाधर्मिता को भी पोषिंत करते रहें और बाबा जी द्वारा प्रदत्त सांस्कृतिक विरासत को परिपुष्ट करते रहें।

अपने स्वकथ्य में **श्री राजीव कान्त** ने बाबा जी को अपनी श्रद्धांजलि अर्पित की और कहा कि लिखने पढ़ने की थोड़ी बहुत समझ जो मुझ में आई है उसका श्रेय मेरे बाबा जी और पिता जी को है जिन्होंने हम बच्चों को ऐसा परिवेश दिया, जिसके लिए मैं उनका चिरऋणी हूं। प्रस्तुत पुस्तक **सोनचिरैया फिर चहकेगी** सन् 1980 से लगभग त्रिदशक की काव्य यात्रा है। प्रायः सभी कविताएं अनायास हैं केवल लिखने के लिए मैं

कुछ नहीं लिख सका। परिवेश में हो रही प्राकृतिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक उथल–पुथल की तीव्रता मन को आन्दोलित करती रहीं और शब्दों के रूप में कागज पर उतर आती रहीं जिनका संकलन यह काव्य कृति है। पुस्तक की शीर्ष कविता में अभिव्यक्त आशावादिता वर्तमान राष्ट्रीय परिदृश्य के लिए प्रासंगिक है –

सोनचिरैया फिर चहकेगी
यह बगिया फिर महकेगी
मंज़िल अब दीख रही
तू बस चलता चल।

श्री अंशु जैन 'अमर' ने श्रद्धेय पितामह के प्रति अपनी भावभीनी श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए कहा कि उनकी संतति में जो सांस्कृतिक और साहित्यिक प्रवृत्ति है वह उन्हीं के आशीर्वाद का सुफल है। उन्होंने श्री राजीव कान्त जैन की प्रस्तुत कृति पर वरेण्य साहित्यकारों के उद्‌गारों का पारायण भी किया। **श्री बालकवि बैरागी** के शब्दों में – "संवेदनशील आदमी कभी भी अपने परिवेश से कट नहीं सकेगा। श्री राजीव कान्त जैन की ये कविताएं इसका प्रमाण हैं। वे रेल विभाग में कामकाज देखते हैं। भारत में रहते हैं। जैन संस्कारों में पले हैं। अधेड़ावस्था की ओर जाती हुई आयु को जी रहे हैं और प्रायः युवा हैं। हाथ में कलम और हृदय में करुणा तथा अहिंसा है। ऐसे सुबंधु जब अभिव्यक्त होते हैं तो कई तरह से कई रंगों में स्वयं को व्यक्त करते हुए प्रस्तुत करते हैं। यह काव्य संकलन उस अभिव्यक्ति का एक ठीक ठीक प्रारूप है।"

मानस चंदन के सम्पादक **साहित्यभूषण डॉ. गणेश दत्त सारस्वत** के शब्दों में – "श्री राजीव कान्त जैन प्रतिभा सम्पन्न रचनाकार हैं। साहित्यिक संस्कार उन्हें उत्तराधिकार में प्राप्त हुए हैं। इसीलिए प्रशासनिक गुरूतर दायित्वों का निर्वहन करते हुए भी वे काव्य रचना के लिए समय निकाल लेते हैं। उनकी कविताएं प्रसाद गुण सम्पन्न हैं तथा उनमें पर्याप्त गाम्भीर्य भी है। यह गम्भीरता उनके सकारात्मक चिंतन की देन है। राजीव जी कविता के लिए कविता नहीं लिखते। उसके द्वारा वे युग को कुछ देना भी चाहते हैं जिसमें वे सफल भी हुए हैं। उनका उद्‌देश्य विसंगतियों से मुक्ति तथा श्रेष्ठत्व का मार्ग प्रशस्त करना है। वे नग्न सत्य के उद्‌घाटन के पक्षधर नहीं हैं। इसीलिए उनका कथ्य

मर्यादित है। वे जो कुछ भी कहते हैं उसके पीछे परिष्करण का भाव ही विशेष रहता है। सच तो यह है कि – 'मात्र मनोरंजन नहीं कलाकार का ध्येय, करे परिष्कृत वृत्ति जो, वह ही है श्रद्धेय' – इस कसौटी पर राजीव जी की कविताएं खरी उतरती हैं।"

यह खेद का विषय है कि डॉ. सारस्वत अब हमारे बीच नहीं है परन्तु राजीव जी की रचना–धर्मिता के सम्बन्ध में उनकी शुभ कामना अभिनन्दनीय रहेगी।

समाज प्रवाह के सम्पादक **श्री मधुश्री काबरा** ने अपने मनोभाव प्रकट करते हुए लिखा है – "पुस्तक प्राप्ति की खुशी से भी अधिक खुशी इस बात की हुई कि नौकरी के कार्यो में व्यस्त रहते हुए भी साहित्य सेवा जारी रखी है। परिवार के पिता जी के संस्कार हैं। वैसे कविता रचना के लिये बिना रेफरेन्स के स्व प्रेरणा से ही रचना लिखनी पड़ती है। तब सोचता हूं कि उस सोचने के लिये वैसी फुर्सत कहां से जुटा लेते हो? उसके पीछे दिल की लगन ही कारण रूप होती है। फिर बात आती है आप के शब्द चयन की .....उतना शब्द भण्डार दिमागी कम्प्यूटर में संग्रहीत होना चाहिये..... उन शब्दों को संजोना ही कविता होती है। कुल मिलाकर तुम्हारा यह प्रयास सार्थक है। आगे भी इसी तरह प्रयास करते रहना ताकि पाठकों को दिल छूने वाली रचनाएं पढ़ने को मिल सकें।"

दुख के साथ कहना पड़ रहा है कि काबरा जी अब हमारे बीच नहीं रहे। 29 मार्च को अपने अवसान से 15 दिन पहले ही उन्होंने अपने उद्‌गार लिखकर भेजे थे।

श्री जे. एल. बाजपेयी जो रेलवे की लेखा सेवा से अवकाश–प्राप्त वरिष्ठ अधिकारी हैं और जिन्होंने इस काव्य संकलन को प्रकाशित कराने में विशेष योगदान किया, ने अपने संस्मरण में लिखा है – "मुझे आज भी स्मरण है 26 जनवरी 1994 का दिन। गणतन्त्र दिवस पर एक बधाई कार्ड मिला था जिसमें शहीदों को नमन करते हुए देशभक्ति से सराबोर एक रचना अंकित थी। कार्ड एवं रचना दोनों ही राजीव के सृजन थे। आज जब कि लोगों को राष्ट्र गान के सम्मान में खड़े होने में लज्जा लगती है और देश–प्रेम कहीं खोता जा रहा है, यह जानकर कि युवा पीढ़ी में राजीव जैसे नौजवान भी हैं जिनमें देश–प्रेम की लौ जल रही है, मुझे आनन्द की अनुभूति हुई। तब से आजतक निरन्तर प्रत्येक वर्ष गणतन्त्र दिवस के

अवसर पर मुझे बधाई कार्ड एवं उस पर उनकी स्वरचित देश–प्रेम से ओत–प्रोत कविता मिलती रही और मेरे संग्रह में जुड़ती रही। इन कविताओं में देश प्रेम तो है ही, साथ ही देश–काल का बखूबी चित्रण भी है जो मर्मस्पर्शी है।"

श्री अंशु जैन ने कहा कि उपरोक्त मनीषियों के उद्‌गार राजीव जी की रचना–धार्मिता एवं उनकी कृति के महत्व को रेखांकित करते हैं।

मंच संचालन आकाशवाणी की एंकर श्रीमती बिन्दु जैन और श्री परवेश जैन ने किया। श्रीमती स्वर्णलता श्रीवास्तव ने सरस्वती वन्दना प्रस्तुत की। साहित्य रसिक श्री अखिलेश कुमार सिंह (अधीक्षण अभियंता, उत्तर प्रदेश पावर कारपोरेशन), श्री अनिल कुमार माथुर (एक्जीक्यूटिव डायरेक्टर, आर. डी.एस.ओ.), श्रीमती नीलम चन्द्रा (निदेशक, आर.डी.एस. ओ.) और श्री कृष्ण कुमार गुप्ता (अधीक्षक, कैरज एण्ड वैगन वर्क शॉप) ने श्री राजीव कान्त जैन की साहित्यिक अभिरुचि और उनके काव्य संकलन की सराहना की। श्री लूण करण नाहर जैन (अध्यक्ष, तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति), डॉ. विजय कुमार जैन (प्रोफेसर, केन्द्रीय संस्कृत विद्यापीठ), श्री स्वराज्य चंद्र जैन, वरिष्ठ पत्रकार श्री रवि मोहन त्रिवेदी और ठहाका–श्री अनिल 'बांके' ने श्रद्धेय डॉ. ज्योति प्रसाद जैन जी के प्रति अपनी भावभीनी श्रद्धांजलि अर्पित की तथा और श्री राजीव कान्त जैन के साहित्यिक अवदान के लिए अपनी शुभ कामना अभिव्यक्त की।

समारोह की विशिष्ट अतिथि, हिन्दी साहित्य मर्मज्ञ **डॉ. सरल अवस्थी** (एसो. प्रोफे., हिन्दी विभाग, श्री जय नारायण स्नातकोत्तर महाविद्यालय) ने कविता संग्रह की कविताओं की भावव्यंजना पर एक साहित्य समीक्षक की दृष्टि से अपने विचार प्रस्तुत किये। 'देश की लगन' के अंतर्गत पहली कविता में कवि भारत के अतीत का स्मरण कर भविष्य की समृद्धि की कामना का प्रकाश देता है –

विकास की डगर पर
नित्य नये डग भर
बीच राह ठौर नहीं
तू बस चलता चल।

चलना जीवन का अनिवार्य सत्य है। **अपनी जड़ें मत खो** में समकालीन चुनौतियों का भावपूर्ण चित्रण किया गया है। **आओ राष्ट्र पताका शान**

से फहरायें में राष्ट्र प्रेम की सशक्त अभिव्यक्ति है। **राजभाषा** कविता में हिन्दी के प्रति कवि का भाव समयोचित है।

'प्रेम की अगन' वर्ग में कुछ कविताओं में मिलन की उत्सुकता है। बसंत की मादकता है। होली के राग रंग है। 'परिवेश की चुभन' वर्ग के अंतर्गत कविताएं कवि की संवेदना को व्यक्त करती है।'मन की उलझन' वर्ग में **मैं देह के मकान में** दार्शनिक कविता है और इस कविता में चिन्तन के तमाम चरण हैं।

शिल्प की दृष्टि से कविताएं अच्छी हैं। शास्त्रीयता के आधार पर देखना निरर्थक है। कथ्य सम्प्रेषणीय है। अन्य भाषाओं के शब्दों का प्रयोग कवि ने निस्संकोच किया है। इन सब के साथ लयबद्धता, भाषा का प्रवाह, सहजता, और स्वाभाविकता इस कृति की विशेषता है। कवि की यह दृष्टि – सुख में मत इतराओ
दुख में मत घबराओ,
जीवन नैया प्रवाह में बहने दो,
कर्म करो, कर्ता–भाव रहने दो।

हम सबकी दृष्टि बने।

समारोह के मुख्य अतिथि, वयोवृद्ध कवि, गीतकार व समीक्षक **श्री रवीन्द्र कुमार 'राजेश'** ने अपने उद्‌गार प्रकट करते हुए कहा कि गीत का सृजन हृदय से होता है। सुर, ताल, लय जैसे संगीतात्मक तत्व उसे और भी कर्णप्रिय बना देते हैं। शब्दों को लय में ढालना, विचारों को सहज भाषा में सम्प्रेषित कर दीर्घावधि तक उस गूंज को प्रवाहित करते रहना गीत की विशेषता होती है। वही स्थिति हृदय स्पर्शी कविता की है। श्री राजीव कान्त जैन द्वारा रचित कविता–संग्रह **'सोनचिरैया फिर चहकेगी'** के 'देश की लगन', 'प्रेम की अगन', परिवेश की चुभन', 'मन की उलझन', एवं 'कुछ यूं ही भटकन' सहित पांच खण्डों की 55 कविताओं में मानव जीवन की संवेदनायें एवं सकारात्मक पक्ष निश्चय ही अभिनन्दनीय हैं। इस संग्रह की अधिकांश प्रस्तुतियां सतरंगी इन्द्रधनुषी छटा से परिपूर्ण हैं। भाव, भाषा एवं शिल्प की दृष्टि से यह संग्रह एक प्रेरक कृति है। मैं रचनाकार के सफल प्रयासों की हृदय से सराहना करता हूं।

समारोह के अध्यक्ष विख्यात साहित्यकार कवि–शिरोमणि **श्री सूर्य कुमार पाण्डेय** ने आज के साहित्यिक वातावरण में संवेदनहीनता और

राष्ट्रीय चेतना के प्रति उदासीनता पर अपनी अन्तः पीड़ा व्यक्त की। उन्होंने कहा कि श्री राजीव कान्त जैन का काव्य संकलन **सोनचिरैया फिर चहकेगी** एक अपवाद है क्योंकि इस संग्रह में संकलित कविताओं को पढ़कर पाठक में देश के लिए कुछ करने की ललक उठेगी और युवा पीढ़ी में स्वतंत्रता के अर्थ और मूल्य को समझने तथा स्वतंत्रता के लिए बलिदान देने वाले शहीदों को जानने की जिज्ञासा जगेगी। "देश की लगन" वर्ग के अन्तर्गत 22 रचनाओं में राष्ट्रीय चेतना के स्वर मुखर हैं और राष्ट्रीयता के दृष्टिकोण से इस वर्ग को संकलन में शीर्ष स्थान उचित ही दिया गया है। भाव व्यंजना, सहज सम्प्रेषणीयता और यथार्थ एवं गम्भीर चिन्तन इस संकलन में संग्रहीत रचनाओं की विशेषता है जो उसे एक अलग पहचान प्रदान करती है।

श्री पाण्डेय ने श्रद्धेय डॉ. ज्योति प्रसाद जैन जी के प्रति अपने श्रद्धास्पद उद्‌गार प्रकट करते हुए कहा कि यह भी अपवाद ही है कि उनकी सन्तति में साहित्यिक–सांस्कृतिक संस्कार मूर्तिमान हैं और उसी का परिणाम है कि उनके पौत्र राजीव कान्त जी ने अपने शासकीय दायित्वों का सम्यक् रूपेण निर्वहन करते हुए अपनी काव्य प्रतिभा और रचनाधर्मिता को जीवन्त बनाये रखा।

अन्त में, **श्री सन्दीप कान्त जैन** (सचिव, ज्योति प्रसाद जैन ट्रस्ट) ने समागत वक्तागण और साहित्य प्रेमी मित्रों के प्रति आभार व्यक्त किया कि उन्होंने अपनी उपस्थिति से समारोह को गरिमा प्रदान की और आयोजन को सफल बनाया।

– श्रीमती मधु जैन

[रोटरी क्लब, कोटा राउण्ड टाउन, में भी क्लब के वरिष्ठ पदाधिकारीगण सर्वश्री रो. रामगोपाल अग्रवाल, जे.एल.बाजपेयी, डॉ. अनिल सुदर्शन, सुभाष अग्रवाल, ओम प्रकाश साहनी और महेन्द्र गुप्त द्वारा **सोनचिरैया फिर चहकेगी** का लोकार्पण किया गया।]

{पुस्तक अनन्त–ज्योति विद्यापीठ, ज्योति निकुंज, चारबाग (रोडवेज बस स्टेशन के पीछे), लखनऊ–226004, से प्राप्त की जा सकती है। मूल्य रु. 125/– है। सम्पर्क मो. 9236062715}

✧✧✧

साहित्य सत्कार

प्राकृत सूक्ति कोश (पाइअ सुत्ति कोसो) : संकलनकर्ता एवं अनुवादिका – डॉ. (श्रीमती) राका जैन; प्र. मैत्री प्रकाशन, 3/65, विकास खण्ड, गोमती नगर, लखनऊ–226010; 2012; पृ. 492; मूल्य रु.170/–

प्राकृत सूक्ति कोश में विभिन्न प्राकृत साहित्य के शताधिक ग्रन्थों से संकलित 2000 सूक्तियां सम्मिलित की गई हैं। दिगम्बर और श्वेताम्बर जैन धार्मिक ग्रन्थों से, साहित्यिक प्राकृत से और शिलालेखीय प्राकृत से सूक्तियों का संकलन किया गया है। प्राकृत की सूक्तियों का संस्कृत छाया के साथ हिन्दी एवं अंग्रेजी भाषाओं में अनुवाद दिया गया है जो इन सूक्तियों के अर्थ–भाव को समझने में सहायक है। इस ग्रन्थ के प्रकाशन में राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान ने आर्थिक सहयोग प्रदान किया है जो यह सूचित करता है कि उक्त संस्थान संस्कृत के साथ पालि एवं प्राकृत भाषा व साहित्य के अध्ययन के महत्व को स्वीकार करता है।

अपनी भूमिका में लेखिका ने सूक्ति के महत्व पर प्रकाश डालते हुए लिखा है कि सूक्ति कला और संस्कृति से सम्बन्धित समकालीन मुद्दो को समझने के लिए प्रेरणा स्रोत होती है। सूक्तियां लोक संस्कृति का अंग है।

सूक्तियों का संकलन अकारादि क्रम से किया गया है और उनमें संदर्भ सूचित किया गया है। परिशिष्ट एक में शब्द अनुक्रमणिका दी गई है। परिशिष्ट दो में प्रयुक्त ग्रन्थों का विवरण दिया गया है, और परिशिष्ट तीन में संकेत विवरण दिया गया है जो संदर्भ को समझने में सहायक है। डॉ. राका जैन द्वारा प्रस्तुत यह कोश प्राकृत भाषा में उपलब्ध साहित्यिक महत्व को समझने में विशेष रूप से सहायक है। इसके लिए वह साधुवाद की पात्र हैं।

कर भला सो हो भला : ले. सी.ए. कपिल कुमार जैन, 1332, पी.एल.शर्मा रोड, (कामधेनु डेरी के पीछे), मेरठ; 2014; पृ. 116 + 4

लेखक श्री कपिल कुमार जैन व्यवसाय से चार्टर्ड एकाउण्टेंट हैं परन्तु प्रवृत्ति से धार्मिक और साहित्यिक हैं। उनके परिवार में जैन धर्म और संस्कृति की आराधना निरंतर रही है। उनके धार्मिक संस्कारों को परिपुष्ट करने में उनके पिता श्री राजेन्द्र कुमार जैन का विशेष श्रेय है।

कर भला सो हो भला प्रथम एकांकी है। इसका सन्देश है कि जो दूसरों की सहायता करने में अपना सब कुछ दे देते हैं उनको पुण्योदय

से सब कुछ मिल जाया करता है अतः परोपकार को जीवन में विशेष महत्व दिया जाये। इसी नाटक के आधार पर इस एकांकी संग्रह का नाम रखा गया है। **दगाबाज, कोई किसी का नहीं, तप की महिमा, गुण ग्रहण का भाव रहे नित, सबसे छोटा रुपैया, कड़वा सच, शाकाहार, कोमल सुधा अनूप, शौच धर्म**, और **झूठे का मुंह काला** – शीर्षक से दस और एकांकी संकलित हैं। ये नाटक दस–लक्षण पर्व में बच्चों द्वारा खेले जा सकते हैं और इस प्रकार खेल ही खेल में बच्चों को धार्मिक ज्ञान के द्वारा संस्कारित भी किया जा सकता है। साथ ही गीत भी दिये गये हैं जो लेखक की ही रचना हैं।

श्री कपिल कुमार ने अपनी यह कृति उपलब्ध करायी, इसके लिए हम आभारी हैं। हमारा आशीर्वाद है कि अपने व्यावसायिक कार्य में व्यस्त रहते हुए वह अपने धार्मिक संस्कारों के अनुरूप रचनाधर्मिता में भी प्रवृत्त रहें।

सौ बोधकथाएं : ले. आचार्य पं. निहालचंद जैन; प्र. वीर सेवा मंदिर, 21, दरियागंज, नई दिल्ली–110002; जनवरी 2013; पृ. 160; मूल्य रु. 60/–

पं. निहालचंद जैन ने बोध कथाओं के माध्यम से यह प्रतिबोधित किया है कि कर्तव्य–बोध, उदारता व सहयोग तथा संस्कारों की सुगन्ध को समाहित करते हुए नैतिकता का आचरण में किस प्रकार पोषण हो। लेखक जैन दर्शन व धर्म के निष्ठावान अध्येता हैं, अतः जैन धर्म और दर्शन की पुट इन कथाओं में होना सहज और स्वाभाविक है तथापि ये बोध कथाएं सामान्य नैतिकता का आचरण में बोध कराती हैं। विषयवस्तु विविध है, शैली संस्मरणात्मक है तथा लेखक के व्यापक अध्ययन की साक्षी भी है। सभी बोध कथाएं एक या दो पृष्ठ से अधिक की नहीं है और वे पाठक को तुरन्त ही प्रभावित करती हैं। इस ज्ञानोपयोगी कृति के प्रणयन के लिए पं. निहालचंद जी को हमारा साधुवाद निवेदित है।

जैन आचार्य मीमांसा में जीवन प्रबन्धन के तत्त्व : ले. डॉ. मुनि मनीष सागर; प्र. प्राच्य विद्यापीठ, दुपाडा रोड, शाजापुर – 465001; 2013; पृ; 770 +lxii; मूल्य रु. 400/–

मुनि मनीष सागर द्वारा यह ग्रन्थ पी–एच.डी. की उपाधि के लिए शोध–प्रबन्ध के रूप में जैन विश्वभारती विश्वविद्यालय, लाडनूं में प्रस्तुत किया गया था। लेखक इन्जीनियरिंग में स्नातक हैं और Business Administration

में परास्नातक हैं। अतः उनकी दृष्टि मातृ धार्मिक या सैद्धांतिक नहीं है। वरन् आधुनिक विज्ञान की दृष्टि से समन्वित है। जैन दर्शन के अध्येयता विभिन्न विद्वानों ने इस ग्रन्थ के विषय में अपने जो विचार व्यक्त किये हैं वे ग्रन्थ में प्रस्तुत विवेचन के महत्व को रेखांकित करते हैं।

अपनी प्रस्तावना में लेखक ने अपने अध्ययन के प्रयोजन को स्पष्ट किया है। उनके अनुसार इस शोध–प्रबन्ध में इस बात की चर्चा की गई है कि जीवन कैसे जिया जाये। जीवन जीने का वह ढंग, इसमें जीवन का प्रतिक्षण एक उपलब्धि बन जाये जीवन को प्रबन्धन से सम्बद्ध करता है। यह जीवन जीने की कला ही जीवन प्रबन्धन है। इसे ही जीवन विज्ञान (Science of Living) भी कहा जाता है। जैन जीवन दृष्टि में प्रबन्धन का अर्थ जीवन के प्रवाह को सम्यक् दिशा प्रदान करना है।

इस शोध–प्रबन्ध में जीवन के विविध पक्षों को ध्यान में रखते हुये उन्हें विसंगतियों से मुक्त कर सुसंगत बनाने का मार्गदर्शन दिया गया है। शोध–प्रबन्ध मानवीय जीवन के प्रबन्धन को लक्ष्य में लेकर लिखा गया है क्योंकि मनुष्य ही जगत का सर्वश्रेष्ठ प्राणी है और उसी में परिवर्तन की सर्वाधिक क्षमता होती है।

अध्ययन 14 अध्यायों में प्रस्तुत है –जीवन प्रबन्धन का पथ, जैन दर्शन एवं जैन आचार्य शास्त्र में जीवन प्रबन्धन, शिक्षा प्रबन्धन, समय प्रबन्धन, शरीर प्रबन्धन, अभिव्यक्ति प्रबन्धन, तनाव एवं मानसिक विकारों का प्रबन्धन, पर्यावरण प्रबन्धन, समाज प्रबन्धन, अर्थ प्रबन्धन, भोगोपभोग प्रबन्धन, धार्मिक व्यवहार प्रबन्धन, आध्यात्मिक विकास एवं जीवन प्रबन्धन, और जीवन प्रबन्धन एक सारांश। अंत में सुन्दर ग्रन्थ सूची दी गई है और संक्षिप्त शब्द कोश भी दिया गया है। ग्रन्थ की साज–सज्जा भी सुन्दर है। लेखक ने स्वयं स्पष्ट किया है कि उन्होंने जैन धर्म की आध्यात्मिक जीवन दृष्टि सम्मुख रखते हुये जीवन प्रबन्धन के कुछ मार्ग दर्शक सिद्धांतों एवं उनके प्रायोगिक पक्षों को प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया है। यद्यपि जैन दर्शन निवृत्तिपरक है तथापि वह प्रवृत्ति की पूर्ण उपेक्षा नहीं करता। लेखक की विवेचना से यदि युवावर्ग में जीवन प्रबन्धन के प्रति जिज्ञासा प्रेरित होती है को यह उनके परिश्रम को सार्थक करेगा।

महिमा भक्तामर स्तोत्र की : सं. श्री रोहित कुमार जैन, प्र. श्री भारतवर्षीय दिगम्बर जैन महासभा, मिल रोड, ऐशबाग, लखनऊ; 2014; पृ 103;

श्री रोहित कुमार जैन ने आचार्य मानतुंग द्वारा संस्कृत में रचित **भक्तामर स्तोत्र** के 48 पदों का विवेचन इस दृष्टि से प्रस्तुत किया है कि

इसमें छिपे हुए गूढ़ रहस्यों को समझा जा सके। मूल संस्कृत श्लोक का हिन्दी में पद्यानुवाद मुनि श्री सौरभ सागर, आचार्य श्री विमल सागर और श्री हेमराज द्वारा प्रस्तुत है। स्व. श्री भगवानदास जैन द्वारा अंग्रेजी में पद्यानुवाद दिया गया है। इन पद्यानुवादों के बाद संकलन कर्ता श्री रोहित कुमार जैन द्वारा हिन्दी और अंग्रेजी में अर्थ दिया गया है और विशेषार्थ भी दिया गया है। श्री रोहित कुमार जैन इस श्रम–साध्य कृति के प्रणयन के लिए साधुवाद के पात्र हैं।

श्री सूर्यस्तवन : ले. साहित्य–भूषण डॉ. परमानन्द जड़िया; प्र. मधूलिका प्रकाशन, 189/51, खत्री टोला, मशकगंज, लखनऊ–18; जनवरी 2014; पृ. 44; मूल्य रु. 40/–

भगवान सूर्य देव पर उनकी भक्ति में रची गई डॉ. परमानन्द जड़िया की रचनाएं इसमें प्रकाशित हैं। यह उनकी 104वीं कृति है। 88 वर्ष की वय में कमर में चोट के कारण अस्वस्थ होने के बावजूद वह भगवान का नाम स्मरण करते रहते हैं और उसी के फलस्वरूप यह पुस्तक प्रकाश में आयी । इसमें दोहा, सोरठा, घनाक्षरी, कवित्त, पंचचामर, गीतिका, गज़ल आदि विभिन्न छन्दों में सूर्य देव की स्तुति है और उनको प्रणाम किया गया है।

हीरक माला : ले. श्री हीरालाल जैन दिवाकर; प्र. दिवाकर प्रकाशन, पूर्व सुभाष टॉकीज, जबलपुर; मार्च 2014; पृ. 20

श्री हीरालाल जैन दिवाकर द्वारा संस्कृत में रचे गये 80 श्लोक और उनमें से कुछ श्लोकों का हिन्दी में पद्यानुवाद इसमें दिया गया है। साथ ही जैन धर्म का तात्विक विवेचन भी संक्षेप में दिया गया है।

अनुभूति के स्वर : ले. श्री अनिल जैन 'राजधानी'; सं. पं. निहालचंद जैन; प्र. प्रकाश शोध संस्थान, दरियागंज, नई दिल्ली; 2013; पृ. 96; मूल्य रु. 75/–

रचनाकार श्री अनिल जैन 'राजधानी' के अनुसार कविता संग्रह **अनुभूति के स्वर** में स्वतः निःसृत भावों का प्रवाह है जो शब्दों में उद्‌घाटित हुआ है। अपने सम्पादकीय प्राक्कथन में पं. निहालचंद जैन ने इंगित किया है कि इस संकलन में चयनित रचनाएं रचनाकार के अन्तस की छवि को प्रतिबिम्बित करती हैं। रचना के विषय विविध हैं। कहीं तत्त्व दर्शन है तो *कहीं अपने आराध्य आचार्य श्री को समर्पण है। कहीं सामाजिक* परिवेश में

घर गृहस्थी की बातें निबद्ध हैं तो कहीं नरेन्द्र मोदी की राजनीति। लगता है जो भी रचनाकार ने लिखा है वह भोगा हुआ यथार्थ है या अनुभव की कसक। इस संकलन में 87 गीत समाहित हैं। ये छंदबद्ध नहीं हैं वरन् रचनाकार की स्व अनुभूति को मुखर करते हैं। रचनाकार प्रौढ़ व्यवसायी हैं और उन्होंने अनुभव में आये विविध विषयों पर अपने भाव इनमें प्रकट किये हैं।

काव्यसुधा मन्दाकिनी : ले. श्री प्रकाश चंद्र जैन 'दास'; प्र. श्री वीरेन्द्र कुमार जैन, 13, सी.डी., आदर्श नगर, आलमबाग, लखनऊ–5; पृ. 90

लेखक ने अपने श्रद्धेय पिता जी श्री मानक चन्द जैन को यह कृति समर्पित की है क्योंकि वे लेखक के प्रेरणास्रोत थे। संस्मरण में उन्होंने 1947 में देश विभाजन के समय पाकिस्तान के क्षेत्र में किस प्रकार मुसलमानों द्वारा हिन्दुओं का कत्ल किया गया, का विवरण भी दिया है क्योंकि वे जिला झेलम में स्थित रोहताश नामक स्थान के निवासी थे। इस पुस्तक में प्रकाशचंद्र जी के 32 स्तोत्र, भजन व कविताएं संकलित हैं। जो भजन आदि इसमें संकलित हैं वे एक सुश्रावक की जैन धर्म में निष्ठा को प्रतिबिम्बित करते हैं। वे जैन धर्म और दर्शन के मनस्वी अध्येता थे। उन्होंने **समणसुत्तम्** का भी हिन्दी में पद्यानुवाद किया है जिसके कुछ अंश **शोधादर्श** में प्रकाशित हुए हैं।

विच्छेदित तीर्थों की खोज : ले. श्री ललित कुमार नाहटा; प्र. जैन श्वे कल्याणक तीर्थ न्यास, श्री हरखचंद नाहटा स्मृति न्यास, हरखमणि, 21, आनन्द लोक, अगस्त क्रान्ति मार्ग, नई दिल्ली–110049; 12 मई 2014; पृ.48 +4; रु.60

श्री ललित कुमार नाहटा ने उन तीन कल्याणक तीर्थों की विशेष रूप से चर्चा की है जो प्रायः विस्मृत हो गये। ये तीर्थ हैं : श्री अष्टापद कल्याणक तीर्थ जहां से ऋषभदेव जी मोक्ष गये थे, श्री भद्दिलपुर कल्याणक तीर्थ जहां शीतलनाथ जी के चार कल्याणक हुए थे, और श्री मिथिला कल्याणक तीर्थ जो मल्लिनाथ और नेमिनाथ के कल्याणकों से सम्बन्धित है। श्री नाहटा ने 1993 में सभी कल्याणक तीर्थों की यात्रा की थी और तब यह पता चला था कि उपरोक्त तीर्थों का कुछ भी पता नहीं है। भद्दिलपुर तीर्थ में 12 मई 2014 को अन्जनशलाका प्रतिष्ठा सम्पन्न हुई। झारखण्ड में जिला चतरा में गांव भोंदल (डाकघर हन्टरगंज–825403) से भद्दिलपुर को चीन्हा गया है। **स्थूलिभद्र सन्देश** के मई 2014 के अंक में श्री भद्दिलपुर में 11 व 12 मई को सम्पन्न हुई तीर्थ की पुनर्स्थापना का विवरण दिया गया है।

राजस्थानी कहावतें : ले. श्रीमती हेमलता मिश्र, सी–32, सेक्टर ई., अलीगंज, लखनऊ–226024

श्रीमती हेमलता मिश्र ने इस पुस्तक में 271 राजस्थानी कहावतों का विवरण दिया है। अधिकांश कहावतें हिन्दी में भी भाषाभेद के साथ प्रचलित हैं। ये कहावतें लोक संस्कृति को प्रतिबिम्बित करती हैं। अकारादि क्रम से इन कहावतों का संकलन किया गया है और उनका अर्थबोध एवं भावबोध भी दिया गया है। इस कृति के प्रणयन के लिए उन्हें साधुवाद! लोक संस्कृति के अध्ययन के लिए यह पुस्तक प्रेरक होगी।

गड़बड़झाला : ले. श्री अनिल बांके; प्र. श्रीमती उमा देवी, कवि कुटीर, 246, राजेन्द्र नगर, लखनऊ–226004; 2013; पृ. 80; मूल्य रु. 120/–

श्री अनिल कुमार वर्मा साहित्य जगत में 'अनिल बांके' के नाम से विख्यात हैं। हास्य और व्यंग्य की साहित्यिक विधा में इनकी रचनायें पाठक और श्रोता को केवल आनन्दित ही नहीं करतीं परन्तु वे उसको सोचने के लिए भी प्रेरित करती हैं। श्री बांके का पहला काव्य संकलन **डेढ़ इंच मुस्कान** 2007 में प्रकाशित हुआ था। उसमें अपना परिचय देते हुये कवि ने लिखा था–

वह जो रोते हुये लोगों को हंसा देता है,
ऐसे 'बांके' को 'अनिल बांके' कहते हैं।

इनकी इसी विशिष्ट शैली के कारण उन्हें सन् 2000 में **ठहाका–श्री सम्मान** से विभूषित किया गया था।

प्रस्तुत काव्य संकलन **'गड़बड़झाला'**, इसी शीर्षक से दैनिक **अमर उजाला** के दिनांक 5 फरवरी 2010 के अंक में प्रकाशित कविता पर आधारित है। प्रारंम्भिक पंक्तियां है –यह कैसा गड़बड़झाला है?

झूठे की होती जीत यहां,
सच्चाई का मुंह काला है।

इस संकलन में प्रकाशित कविताएं मन में छिपे दर्द की अनुभूति कराती हैं। बांके ने ठीक ही कहा है – पहले के नेता जेल जाने के बाद सत्ता पाते थे
आज के कर्णधार सत्ता पाने के बाद जेल जाते हैं।

श्री अनिल बांके का यथार्थ बोध व्यंग्य विधा में मन को गुदगुदाने वाला है और साथ ही चिंतन के लिए भी प्रेरित करता है। प्रेस क्लब में एक भव्य साहित्यिक समारोह में इस पुस्तक का लोकार्पण 18 मई 2014 को किया गया था।

– **डॉ. शशि कान्त**

आभार

साहित्य–भूषण डॉ. परमानन्द जड़िया ने अपनी 16 कृतियां पुस्तकालय को भेंट की – 6 काव्य संग्रह (**कृष्ण सुदामा, शेष सुमित्रानन्दन, श्री हनुमति स्तुति माला, प्रतिच्छाया, छन्द मकरन्द, मानस मन्थन**), चार खण्ड काव्य (**बालक ध्रुव, रुक्मिणी हरण, गंगावतरण की कथा, महाराज दिलीप की गो सेवा**), दो प्रबन्ध काव्य (**कुण्डलिया रामायण, श्रवण चरितोपाख्यान**), एक ब्रज भाषा काव्य, (**लीला कीर्तन कुन्ज**), एक अवधी काव्य (**अंसुआ**), एक गज़ल संग्रह (**सर्जना**) और एक अनुवाद ग्रन्थ (**छायांकन**)।

डॉ. शशि कान्त और सौ. मंजरी जैन ने अपने पौत्र चि. मलय जैन के सौ. संचिता जैन से 25 फरवरी 2014 को सम्पन्न शुभ विवाह के उपलक्ष में रु. 500/– भेंट किये। चि. मलय डॉ. साहब के ज्येष्ठ पुत्र श्री शिरीष कान्त जैन के सुपुत्र हैं।

शोधादर्श के सुधी पाठक श्री महेश नारायण सक्सेना, लखनऊ ने अपने पिता श्री कुंवर बहादुर सक्सेना और माता श्रीमती हंसमुखी देवी की पुनीत स्मृति में रु. 500/– और अपनी बड़ी बहन श्रीमती ओमवती सक्सेना की पुनीत स्मृति में रु. 500/– भेंट किये।

शोधादर्श के सुधी पाठक श्री सुरेन्द्र कुमार जैन, प्राचार्य अहिंसा पब्लिक स्कूल, भंगवा (छतरपुर) ने रु. 500/–भेंट किये।

बड़ौत के श्री सचिन जैन ने रु. 380/– भेंट किये।

समिति के उपाध्यक्ष डॉ. विनय कुमार जैन ने महावीर जयंती के उपलक्ष में रु. 500/– भेंट किये।

श्रीमती त्रिशला जैन शास्त्री, ऐशबाग, लखनऊ, ने श्रुत पंचमी के उपलक्ष में रु. 500/– भेंट किये।

श्री कैलाश नारायण टन्डन, कानपुर, ने अपनी पत्नी श्रीमती शकुन्तला टन्डन की पुनीन स्मृति में रु. 50/– भेंट किये।

सर्वश्री पवन कुमार, नरेन्द्र कुमार एवं वीरेन्द्र कुमार जैन ने अपने पिता श्री प्रकाश चंद्र जैन 'दास' की पुनीत स्मृति में रु. 2100/–भेंट किये।

उपरोक्त महानुभावों की सदाशयता के लिए तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति उनके प्रति आभारी है।

– नलिन कान्त जैन, महामंत्री

अभिनन्दन

17 जनवरी, 2014, को महामहिम राष्ट्रपति द्वारा **प्रो. सुदर्शन लाल जैन** (काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी, के अवकाश–प्राप्त विभागाध्यक्ष और प्रोफेसर) को प्राकृत भाषा के अध्ययन में महती योगदान के लिए सम्मानित किया गया। **डॉ. रजनीश शुक्ल**, विकास अधिकारी, पालि–प्राकृत योजना, राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान, नई दिल्ली, को भी प्राकृत भाषा के क्षेत्र में विशिष्ट योगदान के लिए 'महर्षि बादरायण सम्मान' से अलंकृत किया गया।

23 जनवरी को भोपाल में **श्री कृपाशंकर शर्मा 'अचूक'**, जयपुर, को **बतियाती भोर** (काव्य संग्रह) के लिए देवभारती पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

3 मार्च को नेशनल इन्स्टीटयूट आफ प्राकृत स्टडीज़ एण्ड रिसर्च, श्रवणबेलगोला, के निदेशक पद पर **डॉ. रमेश चन्द जैन**, डी.लिट्, (बिजनौर) नियुक्त किये गये।

13 अप्रैल को जैन विद्या संस्थान, दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र श्रीमहावीरजी, द्वारा **डॉ. (श्रीमती) इन्दु जैन**, नई दिल्ली, को उनकी कृति **शौरसेनी प्राकृत भाषा एवं साहित्य का इतिहास** के लिए रु. 51000/– की सम्मान राशि के साथ "महावीर पुरस्कार 2012" प्रदान किया गया।

फिरोजाबाद में 13 अप्रैल को ही **डॉ. भागचन्द जैन 'भागेन्दु'**, दमोह, को महाकवि रइधु पुरस्कार एवं 'साहित्य महोदधि' की मानद उपाधि से सम्मानित किया गया।

27 अप्रैल को **न्यायमूर्ति राजेन्द्र मल लोढ़ा** भारत के मुख्य न्यायाधीश नियुक्त किये गये। यह जैन समाज के लिए विशेष गौरव की बात है।

26 मई को श्री दिगम्बर जैन तीर्थ ऋषभांचल, गाजियाबाद, में **समन्वय वाणी** के सम्पादक **श्री अखिल बंसल**, जयपुर, को जैन पत्रकारिता के क्षेत्र में विशेष योगदान के लिए 18वां 'ऋषभदेव पुरस्कार' प्रदान किया गया।

7 जून को श्रवणबेलगोला में प्राकृत ज्ञान भारती अन्तर्राष्ट्रीय पुरस्कार से **प्रो. कमलचंद सोगाणी**, जयपुर, और **प्रो. राम प्रकाश पोद्दार**, पुणे, को सम्मानित किया गया।

68–वर्षीय **डॉ. चीरंजीलाल बगड़ा**, कोलकाता, को उनके शाकाहार, जीवदया, अहिंसा एवं पत्रिकारिता के क्षेत्र में उल्लेखनीय योगदान के लिए Indian Institute of Oriental Heritage द्वारा ग्रेटर कैलाश स्थित विवेकानन्द हाल, नई दिल्ली, में Life Time Achievement Award से सम्मानित किया गया। पुनः 27 जून को किशनगढ़ में, आचार्य श्री वर्धमान सागर के 25वें आचार्य पदारोहण 'रजत कीर्ति चारित्र महोत्सव' के अवसर पर डॉ. बगड़ा को रु. 2,11,000/– के रजत कीर्ति पुरस्कार और 'अहिंसा–मनीषी' अलंकरण से सम्मानित किया गया। उक्त अवसर पर बड़ौत के **डॉ. श्रेयांस जैन** को भी 'रजत कीर्ति वाग्भारती' अलंकरण से सम्मानित किया गया।

29 जून को सर्वजनहिताय साहित्यिक समिति ने लखनऊ में वरिष्ठ साहित्यकार **श्री रवीन्द्र कुमार 'राजेश'** को 'साहित्य निधि' अलंकरण से सम्मानित किया। 80–वर्षीय श्री 'राजेश' को यह सम्मान उनके सम्पूर्ण कृतित्व को नमन करने के समान है।

वीर सेवा मंदिर, दिल्ली, के उपनिदेशक **पं. आलोक कुमार जैन** को जैन विश्वभारती संस्थान, लाडनूं द्वारा 'आचार्य देवसेन की कृतियों में दार्शनिक दृष्टि' विषयक शोध–प्रबन्ध पर पी–एच.डी. की उपाधि प्रदान की गयी।

डॉ. (कु.) निधि जैन ने गवर्नमेन्ट स्टैंले मेडिकल कॉलेज, चेन्नई से M.S, (Ophthalmology) की परीक्षा सर्वोच्च अंकों के साथ उत्तीर्ण की। वह श्री एफ.सी.जैन और श्रीमती पुष्पा जैन की सुपुत्री हैं, तथा हमारी समिति के अध्यक्ष श्री लूणकरण नाहर जैन की नातिन हैं।

शोधादर्श का समस्त परिवार और तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति उपरोक्त सभी महानुभावों का उनकी यश–वृद्धि के लिए हार्दिक अभिनन्दन करते हैं।

– नलिन कान्त जैन

✧✧✧

शोक संवेदन

जनवरी से जून 2014 की अर्धवर्षीय अवधि में राष्ट्रीय स्तर के कुछ विशिष्ट महानुभाव अब हमारे बीच नहीं रहे। उनका स्मरण यहां अभिप्रेत है –

6 जनवरी, 2014, को मुम्बई में **श्री दीपचंद भाई गार्डी** का देहावसान हो गया। वह 99 वर्ष के थे। उनकी ख्याति एक दानवीर के रूप में थी।

17 जनवरी को 95–वर्षीय समाज सेवी **श्री बाबूलाल पाटोदी** का बड़नगर में देह वियोग हो गया।

18 फरवरी को मुम्बई में हिन्दी ग्रन्थ रत्नाकर के संचालक **श्री यशोधर हेमचन्द मोदी** का 80 वर्ष की आयु में देहावसान हो गया।

23 फरवरी को भिलाई में अखिल भारतीय दिगम्बर जैन परिषद के राष्ट्रीय अध्यक्ष **श्री बलवंत राय जैन** का निधन हो गया। वह 90 वर्ष के थे और विगत 10 वर्ष से परिषद के राष्ट्रीय अध्यक्ष थे।

2 मार्च को शिकोहाबाद में नेमी–राजुल की नाटिका प्रस्तुत करते हुए जैन समाज में अपनी नाटिकाओं के लिए प्रसिद्ध कलाकार **श्री डी.पी. कौशिक** का निधन हो गया।

20 मार्च को दिल्ली में 99–वर्षीय **श्री खुशवन्त सिंह** का निधन हो गया। वे प्रबुद्ध लेखक थे और अंतिम समय तक लेखन में कियाशील रहे।

श्री एस. श्रीपाल, आई.पी.एस. रिटायर्ड, का 25 मार्च को चेन्नई में निधन हो गया। उनका जन्म 6–4–1938 को हुआ था। वह तमिल जैनों में प्रथम आई.पी.एस. थे। सेवा में तमिलनाडु के पुलिस महानिदेशक का पद प्राप्त किया। पुलिस अधिकारी होने के साथ ही वह जैन दर्शन के विद्वान थे और उन्होंने चेन्नई में Research Foundation of Jainology की स्थापना की थी जिसके वह अंतिम समय तक अध्यक्ष रहे।

29 मार्च को मुम्बई में **समाज प्रवाह** के सम्पादक 79–वर्षीय **श्री मधुश्री काबरा** का निधन हो गया। वह एक प्रबुद्ध समाजचेता पत्रकार और साहित्यकार थे।

उपरोक्त के अतिरिक्त लखनऊ में ही कुछ वरिष्ठ श्रावकों और **शोधादर्श** के प्रेमी पाठकों का विछोह हो गया –

हमारी समिति के सदस्य श्री आदित्य जैन के पिता, 90–वर्षीय, सुश्रावक **श्री वीरेन्द्र कुमार जैन** का 20 मार्च को निधन हो गया।

श्री प्रकाश चन्द्र जैन 'दास' 14 अप्रैल को चिर निद्रा में लीन हो गये। वे 93 वर्ष के थे। उनकी प्रेरणा से लखनऊ में श्री एस.एस.जैन सभा का गठन हुआ था और 1986 में पटेल नगर में श्री महावीर जैन साधना केन्द्र का निर्माण हुआ था। उनका प्राकृत भाषा और संस्कृत का ज्ञान उच्चकोटि का था। वह जैन धर्म दर्शन के मर्मज्ञ विद्वान थे। उनके लेख और कविताएं पत्र–पत्रकाओं में प्रकाशित होते रहते थे, **शोधादर्श** में भी उनकी रचनायें प्रकाशित हुयीं हैं। 13 अप्रैल को महावीर जयंती की सभा में उन्होंने अपना अंतिम उद्‌बोधन दिया था।

79–वर्षीय **श्रीमती बीना जिन्दल** (अजिताश्रम, लखनऊ) 29 अप्रैल को दिवंगत हो गयीं।

15 मई को **शोधादर्श** के प्रेमी पाठक 80–वर्षीय **श्री कृष्ण प्रसाद सक्सेना** का तथा 21 जून को श्री बी.डी.अग्रवाल की 85–वर्षीय धर्मपत्नी **श्रीमती राजेश्वरी अग्रवाल** का निधन हो गया।

उपरोक्त सभी दिवंगत महानुभावों के प्रति शोधादर्श परिवार की भावभीनी श्रद्धांजलि अर्पित है और शोक से संतप्त परिवारों के प्रति हार्दिक संवेदना निवेदित है।

– नलिन कान्त जैन

✧✧✧

प्राकृत जैनशास्त्र और अहिंसा शोध संस्थान, वैशाली

प्राकृत जैनशास्त्र और अहिंसा शोध संस्थान, वैशाली, में दिनांक 31 जनवरी, 2014, को **'प्राकृतभाषा** और **बिहार की भाषाएं'** विषय पर डॉ. गुलाबचन्द्र चौधरी स्मारक व्याख्यानमाला का आयोजन किया गया, जिसकी अध्यक्षता संस्थान के निदेशक डॉ. ऋषभचन्द्र जैन ने की। व्याख्यानमाला में डॉ. हरिशंकर पाण्डेय, प्रोफेसर, प्राकृत एवं जैनागम विभाग, सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी, ने कहा कि प्राकृतभाषा सब की भाषा है, आज भी हम व्याकरण आदि के संस्कार से रहित जिस स्वाभाविक भाषा को बोल–चाल के काम में लेते हैं उसे ही प्राकृत कहा जा सकता है, इसका अध्ययन सबके लिए आवश्यक है।

डॉ. महेन्द्रकुमार जैन 'मनुज', निदेशक, जैन संस्कृति शोध संस्थान, इन्दौर, ने आचार्य कुमुदेन्दु द्वारा रचित 'सिरि भूवलय' नामक विशिष्ट ऐतिहासिक ग्रन्थ की पाण्डुलिपि का परिचय दिया तथा उसे पढ़ने की विविध विधियों पर प्रकाश डाला।

डॉ. सियाराम तिवारी, पूर्व विभागाध्यक्ष हिन्दी एवं डीन, विश्वभारती, शान्तिनिकेतन, पटना, ने प्राकृत और बज्जिका भाषा के कतिपय विशिष्ट शब्दों का तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया, जिससे स्पष्ट हो गया कि आधुनिक भारतीय भाषाएं प्राकृत भाषा की उत्तराधिकारिणी भाषाएं हैं। भाषा के शब्दों में छिपे हुए सांस्कृतिक वैशिष्ट्य को निरूपित किया। उन्होंने कहा कि हम क्षेत्रीय भाषा के शब्दों से उस क्षेत्र की संस्कृति का ज्ञान भलीभांति कर सकते हैं।

डॉ. विजय सुमन ने सम्राट अशोक के लेखों में प्राप्त प्राकृत और बिहार की बोलियों की शब्दावली का तुलनात्मक अध्ययन पावर पाईंट प्रजेंटेशन के साथ प्रस्तुत किया, जिससे लोगों को सुनने के साथ–साथ शब्दों को देखने का भी अवसर मिला।

अध्यक्षीय उद्बोधन में डॉ. जैन ने कहा कि बिहार के लोगों ने अपनी संस्कृति में अंगिका, बज्जिका, भोजपुरी, मगही और मैथिली इन पांच भाषाओं को पलने, बढ़ने और पनपने का अवसर दिया, इससे उनकी

भाषिक एवं सांस्कृतिक विशेषता का बोध सहज ही हो जाता है। बिहार की इन भाषाओं में कम से कम 50 प्रतिशत शब्दावली प्राकृत और अपभ्रंश भाषा की मौजूद है, जिसके अध्ययन के प्रयत्न जारी हैं।

संस्थान सभागार में दिनांक 25 फरवरी को **'आचार्य कुन्दकुन्द का योगदान'** विषयक व्याख्यानमाला का आयोजन किया गया। मुख्य वक्ता डॉ. नरेन्द्र कुमार जैन, सेवानिवृत्त प्रोफेसर, संस्कृत, कु. मायावती राजकीय महिला स्नातकोत्तर विद्यालय, बादलपुर (गौतमबुद्धनगर), गाजियाबाद, ने आचार्य कुन्दकुन्द के योगदान पर विस्तार से प्रकाश डाला, और कहा कि आचार्य कुन्दकुन्द ने जिन दार्शनिक सिद्धान्तों को पल्लवित–पुष्पित किया है, उनका मूल प्राचीन जैनागमों में बीजरूप में सुरक्षित है।

डॉ. विजय सुमन ने आचार्य कुन्दकुन्द के सिद्धान्तों की आधुनिक विज्ञान के सन्दर्भ में समीक्षा की।

अध्यक्षीय उद्बोधन में संस्थान के निदेशक डॉ. ऋषभचन्द्र जैन ने कहा कि आचार्य कुन्दकुन्द ने दर्शन, ज्ञान एवं चारित्र को करने योग्य कार्य मानते हुए इन्हें ही नियम बतलाया तथा इस विषय पर **नियमसार** नामक स्वतन्त्र ग्रन्थ भी रचा। आचार्य कुन्दकुन्द ने त्रिविध आत्मा, तत्त्वार्थ आदि के *विषय में जो मौलिक प्रतिपादन किया है पश्चात्वर्ती सभी आचार्यो* ने उसका अनुकरण करते हुए स्वयं को गौरवान्वित अनुभव किया है। विद्वानों ने आचार्य कुन्दकुन्द को मूल संघ का संस्थापक माना है।

वैशाली महोत्सव एवं महावीर जयन्ती के पावन अवसर पर 13 अप्रैल को **'सामाजिक जीवन में अनेकान्त'** विषय पर विचार गोष्ठी सम्पन्न हुई। संस्थान के निदेशक डॉ. ऋषभचन्द्र जैन ने व्याख्यानमाला के विषय के सन्दर्भ में बताया कि भगवान महावीर ने जो उपदेश दिये, उनमें अकार से प्रारंभ होने वाले अहिंसा, अपरिग्रह और अनेकान्त विशेष रूप से महत्वपूर्ण हैं। अनेकान्त के बिना लोक–व्यवहार का चल पाना भी संभव नहीं है, इसीलिए ऋषि–महर्षियों ने अनेकान्त को लोक का एकमात्र गुरु कहा है।

इतिहासकार श्री सच्चिदानन्द चौधरी, श्री जलेश्वर प्रसाद एवं श्री जय कुमार जैन (शिकोहाबाद) ने अपने–अपने विचार रखे। बाबासाहेब भीमराव अम्बेडकर बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर, के पूर्व आचार्य

डॉ. प्रफुल्ल कुमार सिंह 'मौन' ने अपने अध्यक्षीय वक्तव्य में कहा कि जैनधर्म मानव जीवन का विशाल कोश है।

इस अवसर पर संस्थान के दो नये प्रकाशनों – दिगम्बर संत मुनिश्री प्रणम्यसागर जी महाराज द्वारा प्राकृत भाषा में रचित **'तित्थयरभावणा'** एवं डॉ. श्रीरंजन सूरिदेव द्वारा किये गये भाषानुवाद के साथ प्रकाशित श्वेताम्बर परम्परा के बहुश्रुत विद्वान आचार्य प्रभाचन्द्र द्वारा रचित **'प्रभावक–चरित'** का लोकार्पण भी किया गया।

कुन्दकुन्द भारती, दिल्ली

22 अप्रैल को श्वेतपिच्छाचार्य श्री विद्यानन्द जी मुनि महाराज के 90वें अवतरण दिवस पर कुन्दकुन्द भारती, दिल्ली, में एक विशाल आयोजन के अंतर्गत मूर्धन्य कथा–शिल्पी श्री सुरेश जैन 'सरल' के आचार्य विद्यानन्द की जीवनी विषयक ग्रन्थ **अहो जगत गुरुदेव** का लोकार्पण आचार्यश्री के कर कमलों से सम्पन्न हुआ। आचार्यश्री ने कहा कि श्री सुरेश जैन 'सरल' ने बहुत अच्छा ग्रन्थ लिखा है, उन्हें आशीर्वाद। श्रीमती सरयू दफ्तरी की शाकाहार विषयक पुस्तक का लोकार्पण भी किया गया।

पांच पृथक–पृथक कलादि क्षेत्र के व्यक्तित्वों – स्वरसाधक श्री रवीन्द्र जैन, मुम्बई, डॉ. शशि प्रभा जैन, दिल्ली, डॉ. रमेशचन्द जैन बिजनौर, श्रीमती शकुन्तला जैन, जयपुर, एवं श्री रमेशचन्द जैन, दिल्ली – का सम्मान पत्र एवं सम्मान निधि भेंट कर अभिनन्दन किया गया।

जैन, बौद्ध एवं उपनिषद् वाङ्मय में आध्यात्मिक चिन्तन पर संगोष्ठी, जोधपुर

जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर के संस्कृत विभाग तथा राजस्थान संस्कृत अकादमी, जयपुर के संयुक्त तत्त्वावधान में 12–13 फरवरी को "जैन, बौद्ध एवं उपनिषद् वाङ्मय में अध्यात्म–चिन्तन" विषय पर राष्ट्रीय संगोष्ठी का आयोजन किया गया। संगोष्ठी में कुल 6 सत्रों में 35 शोधपत्र प्रस्तुत हुए। उद्घाटन सत्र की अध्यक्षता करते हुए विश्वविद्यालय के कुलपति प्रो. भंवरसिंह राजपुरोहित ने कहा कि ज्ञान किसी के एकाधिकार का विषय नहीं है। अध्यात्म भारतीय संस्कृति का प्राणभूत तत्त्व है। प्रो. दयानन्द भार्गव, जयपुर, ने कहा कि अन्तर्जगत को व्यवस्थित

करना अध्यात्म है। प्रो. सागर मल जैन, शाजापुर, ने कहा कि भारतीय संस्कृति एक समन्वित संस्कृति है। जैन, बौद्ध और उपनिषद् परम्परा में ममत्व भाव के त्याग, त्यागपूर्वक भोग, स्वामित्व की अपेक्षा उपयोग का अधिकार जैसे विचार तीनों परम्पराओं में स्वीकृत हैं। जब वासना पर विवेक का अंकुश हो जाता है तब अध्यात्म में प्रगति होने लगती है। समस्त वासनाएं मैं एवं मेरेपन के आरोपण से उत्पन्न होती हैं। मुख्य अतिथि संत चन्द्रप्रभ सागर ने कहा कि अध्यात्म का पथ मानव समाज को उत्कर्ष की ओर ले जाता है। अपना अपमान होने पर भी व्यक्ति सम्मानजनक व्यवहार करे, यह अध्यात्म से ही सम्भव है। केवल शिक्षा से इन्सान का निर्माण नहीं हो सकता, अध्यात्म में जीना भी आवश्यक है। संगोष्ठी निदेशक प्रो. धर्मचन्द जैन ने विषय का प्रवर्तन करते हुए कहा कि मनुष्य को आज तनावग्रस्त जीवन में सुख एवं शांति से रहने के लिए अध्यात्म विद्या की महती आवश्यकता है। इस विद्या का विचार जैन, बौद्ध और उपनिषद् वाङ्मय में प्राप्त होता है।

संगोष्ठी में जैन, बौद्ध एवं उपनिषदों की आध्यात्मिक एकता, तीनों में भेदाभेदता, आत्मतत्त्व विवेचन, धर्म का स्वरूप, अहिंसा की अवधारणा, आजीविका–शुद्धि, सम्यक् आचरण, दुख स्वरूप, लोक–कल्याण, कषाय–विवेचन, जीवनमूल्य, योग विद्या, मनोविज्ञान, मोक्षतत्त्व, आचार–मीमांसा आदि विषयों पर विद्वतजनों ने प्रकाश डाला।

संगोष्ठी के दो दिनों में जो विचार मंथन हुआ, उसका कुछ सार इस प्रकार है : मंदिर में पूजा करना अध्यात्म नहीं है, अपितु अपने भीतर झांक कर कर्ममल को धोना अध्यात्म है। जैन, बौद्ध और उपनिषद् की परम्पराओं में दुख मुक्ति पर विचार किया गया है तथा अज्ञान को दुख का कारण माना गया है। तीनों परम्पराओं में साध्य की दृष्टि से समानता है, किन्तु साधन का चिन्तन भिन्न–भिन्न प्रकार से किया गया है। कोई मनुष्य दुखी नहीं होना चाहता है, किन्तु राग–द्वेष, ममता आदि को नहीं छोड़ने से न चाहकर भी दुखी होता है। जैन, बौद्ध और उपनिषद् में दुख के इन कारणों से मुक्त होने के मार्ग बताए गए हैं। अध्यात्म इंसान को निभना और निभाना सिखाता है। सुख, खुद के बदल जाने में है, दूसरों को बदलने में नहीं।

✧✧✧

पाठकों के पत्र

डॉ. ए. एल. श्रीवास्तव, भिलाई

शोधादर्श–78 भी अपनी यशस्वी परम्परा के अनुकूल है। 'कुछ प्रसिद्ध जैन आचार्य' के लेखक श्री स्वराज्य चन्द्र जैन अभियन्ता रहते हुए जैन वाङ्मय एवं उसके रचयिता आचार्यों के जीवन से सुपरिचित बने। अस्तु वे अभिनन्दनीय हैं। 'जैन धर्म का अर्थ–बोध' (सौ. गीता जैन), 'कषाय और परिग्रह' (डॉ0 शशि कान्त) तथा 'Hindu View of Vegetarianism' (Shri B.P. Sinha) बहुत अच्छी और विचारणीय रचनाएं हैं। अंक की पद्य रचनाएं भी सुन्दर भावों से संप्रेषित हैं।

मुझे प्रस्तुत अंक में सर्वाधिक महत्वपूर्ण एवं ज्ञानवर्द्धक लेख डॉ. शशि कान्त का लगा –'वीर–शासन का जन्म स्थान राजगृह'। लगभग 57 वर्ष पूर्व के इस यात्रा वृत्तान्त से जहां राजगृह नगर के दुर्गम मार्गो व सीमा बनाती पहाड़ियों की जानकारी मिलती है, वहीं उन पहाड़ियों में तत्कालीन जैन मंदिरों, उनके ध्वंसावशेषों तथा असुरक्षित अनेक जैन मूर्तियों का विवरण भी मिलता है।

जैन मंदिरों तथा अन्य रंगीन चित्रों से पत्रिका की साज–सज्जा नयनाभिराम हो गयी है। डॉ. शशि कान्त एवं सौ. मंजरी जैन के दाम्पत्य की हीरक जयन्ती से सम्बन्धित चित्रों को दोनों भीतरी आवरणों पर छापकर आपने **शोधादर्श** के सभी पाठकों को पारिवारिक आत्मीयता का सुख प्रदान किया है। संपादन कला का यह एक श्लाघनीय बिन्दु है।

(कुछ मूर्तियों की पीठिका पर सुख पूर्वक लेटी हुयी स्त्री के अंकन के सम्बन्ध में डॉ. श्रीवास्तव की जिज्ञासा है कि क्या जैन साहित्य में इसका कोई साक्ष्य–संकेत मिलता है। ये अंकन जैसे दिखे, उनका उल्लेख मैंने किया है। इनका कोई साहित्यिक आधार मेरी जानकारी में नहीं है। – श.का.)

श्री कैलाश नारायण टन्डन, कानपुर

शोधादर्श–78 के मुख पृष्ठ पर भगवान महावीर की प्रथम देशना स्थली पर निर्मित समवसरण मंदिर का नयनाभिराम चित्र पूर्ववर्ती परम्परा का निर्वाह करने में अत्यन्त सफल है।

सर्वप्रथम मैं अपनी कृतज्ञता डॉ. ए.एल. श्रीवास्तव एवं श्री बी.डी. अग्रवाल के प्रति व्यक्त करता हूं जिन्होंने 'आवागमन का वैज्ञानिक अर्थ' तथा 'मुर्दे की दुनिया' की निष्पक्ष समालोचना कर मेरे प्रयास को प्रोत्साहन दिया।

डॉ. शशि कान्त जैन एवं सौ. मंजरी जैन के दाम्पत्य की हीरक जयन्ती से संबंधित चित्रावली कलात्मक दृष्टि से बेजोड़ है। इस सम्बन्ध में डॉ. जैन की सुपौत्री आयुष्मती मेहा द्वारा प्रस्तुत किया गया फोटो कोलाज उसकी श्रद्धा और प्रगाढ़ प्रेम का अभिनव प्रतीक है।

कवि के रूप में डॉ. शशि कान्त की प्रतिभा का परिचय 'इतिहास संदेश' में मिला। उनका प्रयास अत्यंत सराहनीय है। 'कषाय और परिग्रह' में उन्होंने गागर में सागर भर दिया है।

श्री बी.पी. सिन्हा द्वारा प्रस्तुत Hindu View of Vegetarianism सराहनीय एवं मननीय ही नहीं है वरन् अनुकरणीय तथ्यों से भरपूर है।

श्री रवीन्द्र कुमार 'राजेश' की काव्य कृतियों 'कहां आग से आग बुझी है' और 'खोने का सुख पाकर देखो' में कवि ने अपने हृदय की भावनाओं को उड़ेल कर रख दिया है।

डॉ. परमानन्द जड़िया, लखनऊ

शोधादर्श–78 में सर्वप्रथम मुख पृष्ठ पर दृष्टि गयी। मंदिर के सुन्दर चित्र ने आकर्षित किया तो डॉ. शशि कान्त के लेख 'वीर–शासन' का जन्म–स्थान राजगृह' को पढ़कर राजगिर और विपुलाचल को समझने में सहायता मिली। यह अंक डॉ. शशि कान्त के दाम्पत्य जीवन की हीरक जयन्ती की चित्रावली तथा उससे सम्बन्धित बधाई संदेशो से मण्डित होते हुए भी महत्वपूर्ण लेखों से समाविष्ट है। इस अवसर पर मैं भी डॉ. शशि कान्त को उनके सुखद दाम्पत्य जीवन की कामना करते हुए उन्हें हार्दिक बधाई देना चाहूंगा।

श्री लूणकरण नाहर जैन की कविता 'मेरे प्यारे महावीर' भावपूर्ण है। श्री रवीन्द्र कुमार 'राजेश' की दोनों काव्य प्रस्तुतियां सुन्दर हैं। श्री बी.पी. सिन्हा का लेख Hindu View of Vegetarianism 21 पृष्ठ का और अंग्रेजी में है। यदि वे इसे हिन्दी में प्रस्तुत करते तो उससे अधिक लोग लाभान्वित होते।

'शाकाहारी जागरूक हों' में शाकाहार के जो संकेत दिये गये हैं, उन्हें सामान्य जन नहीं जानते। जिन पदार्थो के पैक पर **फ़ैट** लिखा होता

है उन्हें बच्चे और वयस्क बिना पढ़े बाजार से खरीद कर खाते हैं। 'चर्बी काण्ड' की भांति कोई आन्दोलन नहीं होता।

आप 'साहित्य सत्कार' को बड़े परिश्रम और यत्न से तैयार करते हैं। अन्य विद्वानों के लेख भी शोधपूर्ण तथा ज्ञानवर्द्धक हैं।

श्री बी.डी. अग्रवाल, लखनऊ

आपके तथा सौ. मंजरी जैन के दाम्पत्य की हीरक जयन्ती के लिये मेरी हार्दिक शुभ कामनायें कृपया स्वीकार करें।

यथा नाम तथा गुणः। **शोधादर्श** पढ़ने से स्पष्ट हुआ कि विद्वान लेखकों ने अत्यंत परिश्रम के साथ वास्तव में शोध कार्य किया है। भविष्य में भी ऐसा प्रयास जारी रहे यही मनोकामना है।

आपके लेख 'राजगृह' व श्री बी.पी. सिन्हा के लेख 'Hindu View of Vegetarianism' तथा 'शाकाहारी जागरूक हों' ने मुझे बहुत प्रभावित किया।

डॉ. (कु.)मालती जैन, मैनपुरी,

एक दीर्घ अवधि से मैं **शोधादर्श** की नियमित पाठिका हूं। जैन धर्म, दर्शन एवं साहित्य से संबन्धित गवेषणात्मक, प्रामाणिक आलेखों का प्रकाशन इस पत्र की मौलिक विशेषता रही है, जो इसे पत्र–पत्रिकाओं की भीड़ में विशिष्ट पहचान प्रदान करती है।

शोधादर्श के अंक 78 से मेरा व्यक्तिगत रागात्मक संबंध है। आदरणीय डॉ. शशि कान्त जी व सौ. मंजरी जी के दाम्पत्य की हीरक जयन्ती के मांगालिक अवसर के मधुर क्षणों को कैमरे में कैद कर, आपने मेरे मस्तिष्क में सुषुप्त अतीत की स्मृतियों को जागृत करने का जो शुभ कार्य किया है, उसके लिए हृदय से आभारी हूं। आरा (बिहार) में श्री जैन बालाविश्राम में अध्ययन करते हुए मैं इस विवाह की साक्षी रही हूं। स्वर्गीय डॉ. नेमिचंद्र शास्त्री ने इस पाणिग्रहण संस्कार को विधिपूर्वक सम्पन्न किया था। डॉ. साहब एवं मंजरी जी ने एक आदर्श दम्पति की भूमिका का निर्वाह सफलता पूर्वक किया है। इस सुअवसर पर मेरी शुभकामनायें स्वीकार करें और अपने पूर्वजों के द्वारा सौपी गई सारस्वत विरासत में दैनं–दिनं वृद्धि करते रहें। सारस्वत संपत्ति की विरासत विरलों को ही प्राप्त होती है।

भाई नलिन कान्त जी का अपने परिवार जन के प्रति सम्मान और स्नेह प्रशंसनीय है।

श्री ललित सी. शाह, अहमदाबाद

It is my humble opinion that your magazine is probably the best Jain magazine in India today.

पं. सरमन लाल जैन 'दिवाकर', सरधना/हस्तिनापुर,

शोधादर्श 78 पढ़कर ऐसा आनन्द आया जैसा अनेक ग्रन्थों को पढ़कर आये। साथ ही, शास्त्रों सम्बन्धी पुराणेतिहास का दिग्दर्शन हुआ। जो नहीं पढ़ा–सुना–जाना था, उस सब की जानकारी से हृदय गदगद हो गया।

डॉ. ज्योति प्रसाद जैन का लेख 'जीयात् श्री वीरनाथस्य शासनम्' भगवान महावीर के सम्बन्ध में तथ्य पूर्ण समग्र जानकारी प्रदान कराता है। डॉ. शशि कान्त ने 'वीर–शासन का जन्म स्थान राजगृह' में राजगृह की पंच पहाड़ी का साक्षात् दिग्दर्शन कराया है। श्री स्वराज्य चंद्र जैन ने 'कुछ प्रसिद्ध जैनाचार्य' में विभिन्न आचार्यो की जानकारी देकर ज्ञान वर्द्धन किया है। **शोधादर्श** ऐसी पत्रिका है जो ऐतिहासिकता का दिग्दर्शन कराती है।

श्री सुरेश जैन (आई.ए.एस.), जबलपुर

शोधादर्श 78 पढ़कर हमें तथा विमला जी को अत्यधिक प्रसन्नता हुई। **शोधादर्श** ने डॉ. ज्योति प्रसाद जैन, श्री अजित प्रसाद जैन और श्री रमा कान्त जैन के सक्षम एवं कुशल मार्गदर्शन में निष्ठा पूर्वक कार्य करते हुए बड़ी ऊंचाई प्राप्त की है। हम यह अनुभव कर सकते हैं कि पत्रिका के प्रकाशन में कितने धैर्य और परिश्रम की आवश्यकता होती है। चारो सम्पादक पितृ पुरुषों को हम प्रणाम करते हैं और भाई नलिन जी से अपेक्षा करते हैं कि वे उन सभी के पदचिन्हों पर आगे बढ़ते हुए **शोधादर्श** की चतुर्मुखी प्रगति करने में अपनी प्रभावी भूमिका का निर्वाह करेगें। इस अंक में श्री बी.पी. सिन्हा ने शाकाहार पर अंग्रेजी में शोधपूर्ण एवं सामान्य जन के लिए भी उपयोगी आलेख लिखा है। मैंने इस लेख की छायाप्रतियां विमला जी के साथी न्यायाधीशों को दी हैं। प्रायः सभी ने इस आलेख की सराहना की है।

प्रिय नलिन जी और अंशु जी ने आपके वैवाहिक जीवन की हीरक जयंती मनाकर अत्यधिक सराहनीय और अनुकरणीय कार्य किया है। इस अवसर पर हम दोनों की ओर से हार्दिक बधाई। हम अपने बच्चों को भी स्वर्ण जयंती मनाने के लिए प्रेरित करेंगे और आपसे अपेक्षा करेंगे की अपना मंगल आशीर्वाद हमें दें। (हमारा मंगल आशीर्वाद और हार्दिक शुभ कामना सदैव आपके प्रति रहेंगे। – श.का.)

श्री सुशील के. मित्तल, नई दिल्ली

Thank you very much for sending us the **Shodhadarsh 78** which I read with joy. Please accept our heartiest congratulations on the Diamond Jubilee celeberation of wedding of Dr. Kant and Mrs. Kant.

✦✦✦

आवश्यक सूचना

वार्षिक शुल्क 60 रु. (साठ रुपये), **'महामंत्री, तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उ.प्र.,ज्योति निकुंज,चारबाग, लखनऊ–226004'**, को 'तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति' के नाम लखनऊ में देय चेक अथवा ड्राफ्ट द्वारा भेजने का अनुग्रह करें। मनीआर्डर से भेजने पर उसकी सूचना एक पोस्टकार्ड पर भी अपने पूरे नाम व पते के साथ अवश्य भेजें। विदेशों के लिए पत्रिका का वार्षिक शुल्क 25 डालर है।

शोधादर्श अब षड्मासिक पत्रिका है और सामान्यतया इसके अंक जून–अन्त और दिसम्बर–अन्त में प्रकाशित होते हैं।

शोधादर्श में प्रकाशनार्थ शोधपरक एवं अप्रकाशित लेख आमंत्रित हैं। लेख कागज के एक ओर सुवाच्य अक्षरों में लिखित अथवा टंकित होना चाहिये और उसमें यथावश्यक सन्दर्भ/स्रोत सूचित किये जाने चाहियें। यथासम्भव लेख 3–4 टंकित पृष्ठ से अधिक न हो। लेख की एक प्रति अपने पास अवश्य रख लें। अप्रकाशित लेख–रचना लौटाना कठिन होगा।

शोधादर्श में प्रकाशित लेखों को उद्धरित किये जाने में आपत्ति नहीं है, परन्तु **शोधादर्श** का श्रेय स्वीकार किया जाना और पूर्ण सन्दर्भ दिया जाना अपेक्षित है।

प्रकाशनार्थ लेख और समीक्षार्थ पुस्तक/पत्रिका सम्पादक को **ज्योति निकुंज, चारबाग, लखनऊ–226004,** के पते पर भेजे जायें।

प्रत्यावर्तन में पत्रिका की केवल एक प्रति सम्पादक को उपरोक्त पते पर भेजी जाये।

लेखक के विचारों से सम्पादक मंडल का सहमत होना आवश्यक नहीं है। लेख में दिये गये तथ्यों और सन्दर्भों की प्रामाणिकता के सम्बन्ध में लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं।

सभी विवाद लखनऊ में स्थित सक्षम न्यायालयों/न्यायाधिकरणों के क्षेत्राधिकार के अधीन होंगे।

सुधी पाठक कृपया अपनी सम्मति और सुझावों से अवगत करावें ताकि पत्रिका के स्तर को बनाये रखने और उन्नत करने में हमें प्रोत्साहन तथा मार्गदर्शन प्राप्त होता रहे। कृपया पत्रिका पहुंचने की सूचना भी देवें।

– **सम्पादक**

शोधादर्श के आजीवन अभिदाता

1 श्री अवनीश गर्ग जैन एवं श्रीमती रेखा गर्ग, लखनऊ–226001
2 डॉ. आर. के. अग्रवाल, लखनऊ–226012
3 डॉ. (श्रीमती) इन्दु रस्तोगी, लखनऊ–226010
4 डॉ. एस.के. जैन, लखनऊ–226010
5 श्री कमल सिंह रामपुरिया, हावड़ा–711101
6 डॉ. (श्रीमती) कुसुम पटोरिया, नागपुर–440001
7 श्री के.एस. पुरोहित, गांधी नगर–382009
8 प्रो. के.डी. मिश्रीकोटकर, चांदुर बाजार–444704
9 श्री चक्रेश जैन, इन्दौर–452018
10 श्री ब्र. जयनिशान्त जैन, टीकमगढ़–472001
11 डॉ. जितेन्द्र बी. शाह, अहमदाबाद–380001
12 श्री प्रद्युम्नश्री महाराज (द्वारा श्री जितेन्द्र कापड़िया), अहमदाबाद–380007
13 श्री प्रवीन कुमार जैन, नई दिल्ली–110002
14 मुनिश्री प्रमाणसागरजी (द्वारा श्री संतोषकुमार जयकुमार),सागर–470002
15 श्री भरत कुमार मोदी, इन्दौर– 452001
16 श्री माणिक चन्द्र जैन लुहाड़िया, कुन्दकुन्द नगर, सोनागिर–475686
17 श्री रूप चन्द जैन कटारिया, नई दिल्ली–110001
18 श्री ललित सी. शाह, अहमदाबाद–380014
19 मुनिश्री विमलसागर जी (द्वारा डॉ. शैलेन्द्र हरण जी), उदयपुर–313001
20 श्री विवेक काला, जयपुर–302004
21 श्री वीरेन्द्र कुमार जैन, गाजियाबाद–201010
22 श्री मुकेश जैन, एडवोकेट, मुजफ्फरनगर–251002
23 श्री वेद प्रकाश गर्ग, मुजफ्फरनगर– 251002
24 श्री शान्तीलाल जैन बैनाड़ा, आगरा–282002
25 श्री श्रीकिशोर जैन एवं श्री शरद कुमार जैन, दिल्ली–110051
26 श्री सतीश कुमार जैन, नई दिल्ली–110070
27 श्री ब्र. सन्दीप सरल, बीना–470113
28 श्री सुरेश चन्द्र जैन, मसूरी–248179
29 श्रीमती त्रिशला जैन शास्त्री, लखनऊ–226004
30 श्री ज्ञानेन्द्र मोहन सिन्हा, लखनऊ–226006

वर्ष 2014 का वार्षिक शुल्क प्रदायी पाठक

1 श्री अशोक कुमार जैन, सतना
2 श्री आदेश्वर प्रसाद जैन, सिकन्दराबाद
3 श्री इन्द्र कुमार साटीया, हुबली (2018 तक)
4 श्री कैलाश नारायण टन्डन, कानपुर
5 श्री दुलीचंद जैन, चेन्नई
6 श्री धनप्रकाश जैन, मेरठ
7 श्री पद्मराज कुमार जैन, आरा
8 श्री पवन कुमार जैन, पुणे,
9 बी.एस.एम. (पी.जी.) कॉलेज, रुड़की
10 श्री मगनलाल जैन, लखनऊ
11 श्री महेशचंद जैन, सिकन्दराबाद (उ.प्र.)
12 श्री महेश नारायण सक्सेना, लखनऊ (2016 तक)
13 श्री रतन चन्द्र गुप्ता, लखनऊ
14 श्री रवि प्रकाश जैन, लखनऊ
15 श्री विनय कुमार जैन, मशकगंज, लखनऊ (2015 भी)
16 डॉ. विनोद कुमार तिवारी, रोसड़ा
17 श्री सचिन जैन, बड़ौत
18 अपभ्रंश साहित्य एकेडेमी, जयपुर
19 श्री मुक्तेश जैन 'सरस', कुरावली

✧✧✧

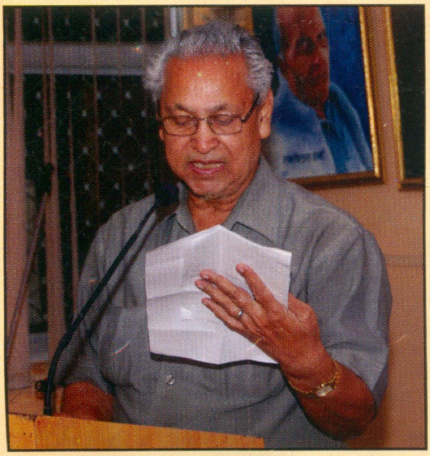

श्री लूण करण नाहर जैन और प्रो. डॉ. विजय कुमार जैन द्वारा श्रद्धांजलि एवं शुभकामना

विशिष्ट अतिथि डॉ. सरल अवस्थी द्वारा समीक्षा

मुख्य अतिथि श्री रवीन्द्र कुमार 'राजेश' द्वारा उद्‌बोधन

श्री सूर्य कुमार पाण्डेय द्वारा अध्यक्षीय सम्बोधन